तू गुलाब होकर महक...

प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद संत श्री

आसारामजी महाराज के सत्संग-प्रवचन
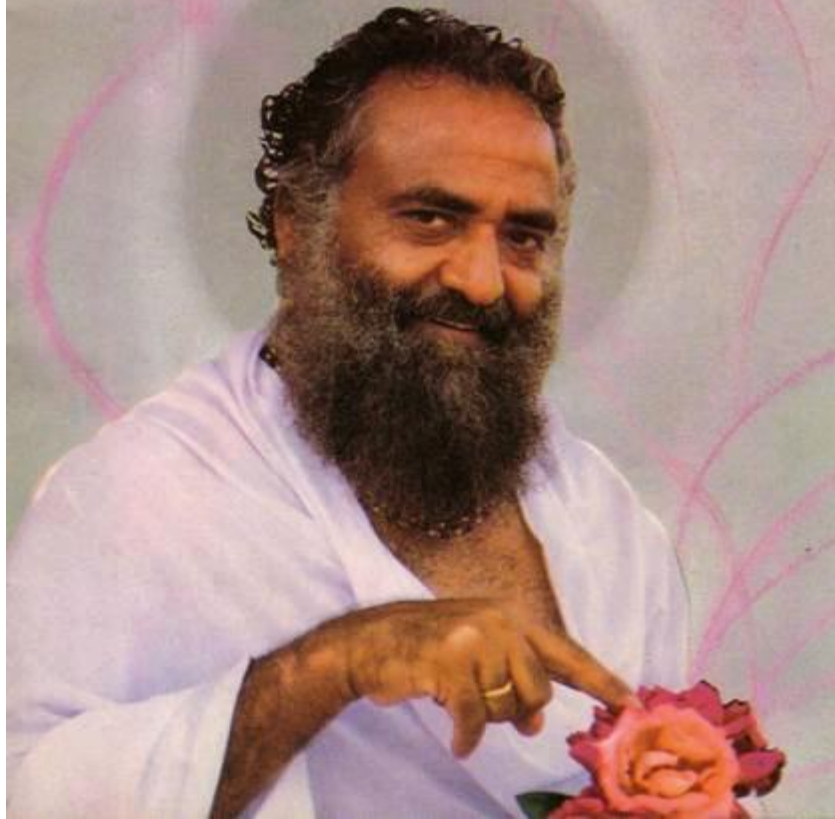
प्रस्तावना

जिस प्रकार भवन का स्थायित्व एवं सुदृढ़ता नींव पर निर्भर है, वैसे ही देश का भविष्य विद्यार्थियों पर निर्भर है। आज का विद्यार्थी कल का नागरिक है। उचित मार्गदर्शन एवं संस्कारों को पाकर वह एक आदर्श नागरिक बन सकता है।

विद्यार्थी तो एक नन्हें–से कोमल पौधे की तरह होता है। उसे यदि उत्तम शिक्षा–दीक्षा मिले तो वही नन्हा–सा कोमल पौधा भविष्य में विशाल वृक्ष बनकर पल्लवित और पुष्पित होता हुआ अपने सौरभ से संपूर्ण चमन को महका सकता है। लेकिन यह तभी संभव है जब उसे कोई योग्य मार्गदर्शक मिल जायँ, कोई समर्थ गुरु मिल जायँ और वह दृढ़ता तथा तत्परता से उनके उपदिष्ट मार्ग का अनुसरण कर ले।

नारदजी के मार्गदर्शन एवं स्वयं की तत्परता से ध्रुव भगवद्–दर्शन पाकर अटलपद में प्रतिष्ठित हुआ। हजार–हजार विघ्न–बाधाओं के बीच भी प्रह्लाद हरिभक्ति में इतना तल्लीन रहा कि भगवान नृसिंह को अवतार लेकर प्रगट होना पड़ा।

मीरा ने अन्त समय तक गिरिधर गोपाल की भक्ति नहीं छोड़ी। उसके प्रभु–प्रेम के आगे विषधर को हार बनना पड़ा, काँटों को फूल बनना पड़ा। आज भी मीरा का नाम करोड़ों लोग बड़ी श्रद्धा–भक्ति से लेते हैं।

ऐसे ही कबीरजी, नानकजी, तुकारामजी व एकनाथजी महाराज जैसे अनेक संत हो गये हैं, जिन्होंने अपने गुरु के बताए मार्ग पर दृढ़ता व तत्परता से चलकर मनुष्य जीवन के अंतिम ध्येय 'परमात्म–साक्षात्कार' को पा लिया।

हे विद्यार्थीयो! उनके जीवन का अनुसरण करके एवं उनके बतलाये हुए मार्ग पर चलकर आप भी अवश्य महान् बन सकते हो।

परम पूज्य संत श्री आसारामजी महाराज द्वारा वर्णित युक्तियों एवं संतों तथा गुरुभक्तों के चरित्र का इस पुस्तक से अध्ययन, मनन एवं चिन्तन कर आप भी अपना जीवन–पथ आलोकित करेंगे, इसी प्रार्थना के साथ...................

विनीत,
श्री योग वेदान्त सेवा समिति, अहमदाबाद आश्रम।

अनुक्रम

पूज्य बापू जी का उदबोधन

हमारा भारत उन ऋषियों मुनियों का देश है जिन्होंने आदिकाल से ही इसकी व्यवस्थाओं के उचित संचालन के निमित्त अनेक सिद्धान्तों की रचना कर प्रत्येक शुभ कार्य के साथ धार्मिक आचार–संहिता का निर्माण किया है।

मनुष्य के कर्म को ही जिन्होंने धर्म बना दिया ऐसे ऋषि–मुनियों ने बालक के जन्म से ही मनुष्य के कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया। लेकिन मनुष्य जाति का दुर्भाग्य है कि वह उनके सिद्धान्तों को न अपनाते हुए, पथभ्रष्ट होकर, अपने दिल में अनमोल खजाना छुपा होने के बावजूद भी, क्षणिक सुख की तलाश में अपनी पावन संस्कृति का परित्याग कर, विषय–विलास–विकार से आकर्षित होकर नित्यप्रति विनाश की गहरी खाई में गिरता जा रहा है।

आश्चर्य तो मुझे तब होता है, जब उम्र की दहलीज़ पर कदम रखने से पहले ही आज के विद्यार्थी को पाश्चात्य अंधानुकरण की तर्ज पर विदेशी चेनलों से प्रभावित होकर डिस्को, शराब, जुआ, सट्टा, भाँग, गाँजा, चरस आदि अनेकानेक प्रकार की बुराईयों से लिप्त होते देखता हूँ।

भारत वही है लेकिन कहाँ तो उसके भक्त प्रह्लाद, बालक ध्रुव व आरूणि–एकलव्य जैसे परम गुरुभक्त और कहाँ आज के अनुशासनहीन, उद्दण्ड एवं उच्छृंखल बच्चे? उनकी तुलना आज के नादान बच्चों से कैसे करें? आज का बालक बेचारा उचित मार्गदर्शन के अभाव में पथभ्रष्ट हुए जा रहा है, जिसके सर्वाधिक जिम्मेदार उसके माता–पिता ही हैं।

प्राचीन युग में माता–पिता बच्चों को स्नेह तो करते थे, लेकिन साथ ही धर्मयुक्त, संयमी जीवन–यापन करते हुए अपनी संतान को अनुशासन, आचार–संहिता एवं शिष्टता भी सिखलाते थे और आज के माता–पिता तो अपने बच्चों के सामने ऐसे व्यवहार करते हैं कि क्या बतलाऊँ? कहने में भी शर्म आती है।

प्राचीन युग के माता–पिता अपने बच्चों को वेद, उपनिषद एवं गीता के कल्याणकारी श्लोक सिखाकर उन्हें सुसंस्कृत करते थे। लेकिन आजकल के माता–पिता तो अपने बच्चों को गंदी विनाशकारी फिल्मों के दूषित गीत सिखलाने में बड़ा गर्व महसूस करते हैं। यही कारण है कि प्राचीन युग में श्रवण कुमार जैसे मातृ–पितृभक्त पैदा हुए जो अंत समय तक माता–पिता की सेवा–शुश्रूषा से स्वयं का जीवन धन्य कर लेते थे और आज की संतानें तो बीबी आयी कि बस... माता–पिता से कह देते हैं कि तुम–तुम्हारे, हम–हमारे। कई तो ऐसी कुसंतानें निकल जाती हैं कि बेचारे माँ–बाप को ही धक्का देकर घर से बाहर निकाल देती हैं।

इसलिए माता–पिता को चाहिए कि वे अपनी संतान के गर्भधारण की प्रक्रिया से ही धर्म व शास्त्र–वर्णित, संतों के कहे उपदेशों का पालन कर तदनुसार ही जन्म की प्रक्रिया संपन्न करें तथा अपने बच्चों के सामने कभी कोई ऐसा क्रियाकलाप या कोई अश्लीलता न करें जिसका बच्चों के दिलो–दिमाग पर विपरीत असर पड़े।

प्राचीन काल में गुरुकुल पद्धति शिक्षा की सर्वोत्तम परम्परा थी। गुरुकुल में रहकर बालक देश व समाज का गौरव बनकर ही निकलता था क्योंकि बच्चा प्रतिपल गुरु की नज़रों के सामने रहता था और आत्मवेत्ता सदगुरु जितना अपने शिष्य का सर्वांगीण विकास करते हैं, उतना माता–पिता तो कभी सोच भी नहीं सकते।

आजकल के विद्यालयों में तो पेट भरने की चिन्ता में लगे रहने वाले शिक्षकों एवं शासन की दूषित शिक्षा–प्रणाली के द्वारा बालकों को ऐसी शिक्षा दी जा रही है कि बड़ा होते ही उसे सिर्फ नौकरी की ही तलाश रहती है। आजकल का पढ़ा–लिखा हर नौजवान मात्र कुर्सी पर बैठने की ही नौकरी पसन्द करता है। उद्यम–व्यवसाय या परिश्रमी कर्म को करने में हर कोई कतराता है। यही कारण है कि देश में बेरोजगारी, नशाखोरी और अपराधिक प्रवृत्तियाँ बढ़ती जा रही हैं क्योंकि 'खाली दिमाग शैतान का घर है। ऐसे में स्वाभाविक ही उचित मार्गदर्शन के अभाव में युवा पीढ़ी मार्ग से भटक गयी है।

आज समाज में आवश्यकता है ऐसे महापुरुषों की, सदगुरुओं की तथा संतों की जो बच्चों तथा युवा विद्यार्थियों का मार्गदर्शन कर उनकी सुषुप्त शक्ति का अपनी अपनी शक्तिपात–वर्षा से जाग्रत कर सकें।

आज के विद्यार्थियों को उचित मार्गदर्शक की बहुत आवश्यकता है जिनके सान्निध्य में पाश्चात्य–सभ्यता का अंधानुकरण करने वाले नन्हें–मुन्ने लेकिन भारत का भविष्य कहलाने वाले विद्यार्थी अपना जीवन उन्नत कर सकें।

विद्यार्थी जीवन का विकास तभी संभव है जब उन्हें यथायोग्य मार्गदर्शन दिया जाए। माता–पिता उन्हें बाल्यावस्था से ही भारतीय संस्कृति के अनुरूप जीवन–यापन की, संयम एवं सादगीयुक्त जीवन की प्रेरणा प्रदान कर, किसी ऐसे महापुरुष का सान्निध्य प्राप्त करवायें जो स्वयं जीवन्मुक्त होकर अन्यों को भी मुक्ति प्रदान करने का सामर्थ्य रखते हों.

भारत में ऐसे कई बालक पैदा हुए हैं जिन्होंने ऐसे महापुरुषों के चरणों में अपना जीवन अर्पण कर, लाखों–करोड़ों दिलों में आज भी आदरणीय पूजनीय बने रहने का गौरव प्राप्त किया है। इन मेधावी वीर बालको की कथा इसी पुस्तक में हम आगे पढ़ेंगे भी। महापुरुषों के सान्निध्य का ही यह फल है कि वे इतनी ऊँचाई पर पहुँच सके अन्यथा वे कैसा जीवन जीते क्या पता?

हे विद्यार्थी! तू भारत का भविष्य, विश्व का गौरव और अपने माता–पिता की शान है। तेरे भीतर भी असीम सामर्थ का भण्डार छुपा पड़ा है। तू भी खोज ले ऐसे ज्ञानी पुरुषों को और उनकी करुणा–कृपा का खजाना पा ले। फिर देख, तेरा कुटुम्ब और तेरी जाति तो क्या, संपूर्ण विश्व के लोग तेरी याद और तेरा नाम लिया करेंगे।

इस पुस्तक में ऐसे ही ज्ञानी महापुरुषों, संतों और गुरुभक्तों तथा भगवान के लाडलों की कथाओं तथा अनुभवों का वर्णन है, जिसका बार–बार पठन, चिन्तन और मनन करके तुम सचमुच में महान बन जाओगे। करोगे ना हिम्मत?

- नित्य ध्यान, प्राणायाम, योगासन से अपनी सुषुप्त शक्तियों को जगाओ।
- दीन–हीन–कंगला जीवन बहुत हो चुका। अब उठो... कमर कसो। जैसा बनना है वैसा आज से और अभी से संकल्प करो....
- मनुष्य स्वयं ही अपने भाग्य का निर्माता है।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

कदम अपना आगे बढ़ाता चला जा....

कदम अपना आगे बढ़ाता चला जा।

सदा प्रेम के गीत गाता चला जा॥

तेरे मार्ग में वीर! काँटे बड़े हैं।
लिये तीर हाथों में वैरी खड़े हैं।
बहादुर सबको मिटाता चला जा।
कदम अपना आगे बढ़ाता चला जा॥

तू है आर्यवंशी ऋषिकुल का बालक।
प्रतापी यशस्वी सदा दीनपालक।
तू संदेश सुख का सुनाता चला जा।
कदम अपना आगे बढ़ाता चला जा॥

भले आज तूफान उठकर के आयें।
बला पर चली आ रही हैं बलाएँ।
युवा वीर है दनदनाता चला जा।
कदम अपना आगे बढ़ाता चला जा॥

जो बिछुड़े हुए हैं उन्हें तू मिला जा।
जो सोये पड़े हैं उन्हें तू जगा जा।
तू आनंद का डंका बजाता चला जा।
कदम अपना आगे बढ़ाता चला जा॥

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

तू गुलाब होकर महक.....

संगति का मानव जीवन पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। यदि अच्छी संगत मिले तो मनुष्य महान हो जाता है, लेकिन वही मनुष्य यदि कुसंग के चक्कर में पड़ जाए तो अपना जीवन नष्ट कर लेता है। अतः अपने से जो पढ़ाई में एवं शिष्टता में आगे हों ऐसे विद्यार्थियों का आदरपूर्वक संग करना चाहिए तथा अपने से जो नीचे हों उन्हें दयापूर्वक ऊपर उठाने का प्रयास करना चाहिए, लेकिन साथ ही यह ध्यान भी रहे की कहीं हम उनकी बातों में न फँस जाएं।

एक बार मेरे सदगुरुदेव पूज्यपाद स्वामी श्री लीलाशाह जी महाराज ने मुझे गुलाब का फूल बताकर कहाः "यह क्या है?"

मैंने कहाः 'बापू! यह गुलाब का फूल है।"

उन्होंने आगे कहाः "इसे तू डालडा के डिब्बे पर रख फिर सूँघ अथवा गुड़ के ऊपर रख, शक्कर के ऊपर रख या चने अथवा मूँग की दाल पर रख, गंदी नाली के पास रख ऑफिस में रख। उसे सब जगह घुमा,

सब जगह रख, फिर सूँघ तो उसमें किसकी सुगंध आएगी?"

मैंने कहाः"जी, गुलाब की।"

गुरुदेवः "गुलाब को कहीं भी रख दो और फिर सूँघो तो उसमें से सुगन्ध गुलाब की ही आएगी। ऐसे ही हमारा जीवन भी गुलाब जैसा होना चाहिए। हमारे सदगुणों की सुगन्ध दूसरों को लेनी हो तो लें किन्तु हममें किसी की दुर्गन्ध प्रविष्ट न हो। तू गुलाब होकर महक.... तुझे जमाना जाने।

किसी के दोष हममें ना आयें, इसका ध्यान रखना चाहिए। अपने गुण कोई लेना चाहे तो भले ले ले।

भगवान का ध्यान करने से, एकाग्र होने से, माता-पिता का आदर करने से, गुरुजनों की बातों को आदरपूर्वक मानने से हममें सदगुणों की वृद्धि होती है।

प्रातःकाल जल्दी उठकर माता-पिता को प्रणाम करो। भगवान श्रीरामचन्द्रजी प्रातःकाल जल्दी उठकर माता-पिता एवं गुरु को प्रणाम करते थे।

प्रातःकाल उठहि रघुनाथा मातु-पितु गुरु नावहिं माथा।

श्रीरामचन्द्रजी जब गुरु आश्रम में रहते थे ते गुरु जी से पहले ही नींद से जाग जाते थे।

गुरु से पहले जगपति जागे राम सुजान।

ऐसा राम चरितमानस में आता है।

माता-पिता एवं गुरुजनों का आदर करने से हमारे जीवन में दैवी गुण विकसित होते हैं, जिनके प्रभाव से ही हमारा जीवन दिव्य होने लगता है।

हे विद्यार्थी! तू भी निष्कामता, प्रसन्नता, असंगता की महक फैलाता जा।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

जीवन विकास का मूल 'संयम'

एक बड़े महापुरुष थे। हजारों-लाखों लोग उनकी पूजा करते थे, जय-जयकार करते थे। लाखों लोग उनके शिष्य थे, करोड़ों लोग उन्हें श्रद्धा-भक्ति से नमन करते थे। उन महापुरुष से किसी व्यक्ति ने पूछाः

"राजा-महाराजा, राष्ट्रपति जैसे लोगों को भी केवल सलामी मारते हैं या हाथ जोड़ लेते हैं, किन्तु उनकी पूजा नहीं करते। जबकि लोग आपकी पूजा करते हैं। प्रणाम भी करते हैं तो बड़ी श्रद्धा-भक्ति से। ऐसा नहीं कि केवल हाथ जोड़ दिये। लाखों लोग आपकी फोटो के आगे भोग रखते हैं। आप इतने महान कैसे बने?

दुनिया में मान करने योग्य तो बहुत लोग हैं, बहुतों को धन्यवाद और प्रशंसा मिलती है लेकिन श्रद्धा-भक्ति से ऐसी पूजा न तो सेठों की होती है न साहबों की, न प्रेसीडेंट की होती है न मिलिट्री ऑफिसर की, न राजा की और न महाराजा की। अरे! श्री कृष्ण के साथ रहने वाले भीम, अर्जुन, युधिष्ठिर आदि की भी पूजा नहीं होती जबकि श्रीकृष्ण की पूजा करोड़ों लोग करते हैं। भगवान राम को करोड़ों लोग मानते हैं। आपकी पूजा भी भगवान जैसी ही होती है। आप इतने महान कैसे बने?"

उन महापुरुष ने जवाब में केवल एक ही शब्द कहा और वह शब्द था – 'संयम'।

तब उस व्यक्ति ने पुनः पूछाः "हे गुरुवर! क्या आप बता सकते हैं कि आपके जीवन में 'संयम' का पाठ कबसे शुरु हुआ?"

महापुरुष बोलेः "मेरे जीवन में 'संयम' की शुरुआत मेरी पाँच वर्ष की आयु से ही हो गयी। मैं जब पाँच वर्ष का था तब मेरे पिता जी ने मुझसे कहाः

"बेटा! कल हम तुम्हें गुरुकुल भेजेंगे। गुरुकुल जाते समय तेरी माँ साथ में नहीं होगी, भाई भी साथ नहीं आयेगा और मैं भी साथ नहीं आऊँगा। कल सुबह नौकर तुझे स्नान, नाश्ता करा के, घोड़े पर बिठाकर गुरुकुल ले जायेगा। गुरुकुल जाते समय यदि हम सामने होंगे तो तेरा मोह हममें हो सकता है। इसलिए हम दूसरे के घर में छिप जायेंगे। तू हमें नहीं देख सकेगा किन्तु हम ऐसी व्यवस्था करेंगे कि हम तुझे देख सकेंगे। हमें देखना है कि तू रोते–रोते जाता है या हमारे कुल के बालक को जिस प्रकार जाना चाहिए वैसे जाता है। घोड़े पर जब जायेगा और गली में मुड़ेगा, तब भी यदि तू पीछे मुड़कर देखेगा तो हम समझेंगे कि तू हमारे कुल में कलंक है।"

पीछे मुड़कर देखने से भी मना कर दिया। पाँच वर्ष के बालक से इतनी योग्यता की इच्छा रखने वाले मेरे माता–पिता को कितना कठोर हृदय करना पड़ा होगा? पाँच वर्ष का बेटा सुबह गुरुकुल जाये, जाते वक्त माता–पिता भी सामने न हों और गली में मुड़ते वक्त घर की ओर देखने की भी मनाही! कितना संयम!! कितना कड़क अनुशासन!!!

पिता ने कहाः "फिर जब तुम गुरुकुल में पहुँचोगे और गुरुजी तुम्हारी परीक्षा के लिए तुमसे कहेंगे कि 'बाहर बैठो' तब तुम्हें बाहर बैठना पड़ेगा। गुरु जी जब तक बाहर से अन्दर आने की आज्ञा न दें तब तक तुम्हें वहाँ संयम का परिचय देना पड़ेगा। फिर गुरुजी ने तुम्हें गुरुकुल में प्रवेश दिया, पास किया तो तू हमारे घर का बालक कहलायेगा, अन्यथा तू हमारे खानदान का नाम बढ़ानेवाला नहीं, नाम डुबानेवाला साबित होगा। इसलिए कुल पर कलंक मत लगाना, वरन् सफलतापूर्वक गुरुकुल में प्रवेश पाना।"

मेरे पिता जी ने मुझे समझाया और मैं गुरुकुल में पहुँचा। हमारे नौकर ने जाकर गुरुजी से आज्ञा माँगी कि यह विद्यार्थी गुरुकुल में आना चाहता है।

गुरुजी बोलेः "उसको बाहर बैठा दो।" थोड़ी देर में गुरुजी बाहर आये और मुझसे बोलेः "बेटा! देख, इधर बैठ जा, आँखें बन्द कर ले। जब तक मैं नहीं आऊँ और जब तक तू मेरी आवाज़ न सुने तब तक तुझे आँखें नहीं खोलनी हैं। तेरा तेरे शरीर पर, मन पर और अपने आप पर कितना संयम है इसकी कसौटी होगी। अगर तेरा अपने आप पर संयम होगा तब ही गुरुकुल में प्रवेश मिल सकेगा। यदि संयम नहीं है तो फिर तू महापुरुष नहीं बन सकता, अच्छा विद्यार्थी भी नहीं बन सकेगा।"

संयम ही जीवन की नींव है। संयम से ही एकाग्रता आदि गुण विकसित होते हैं। यदि संयम नहीं है तो एकाग्रता नहीं आती, तेजस्विता नहीं आती, यादशक्ति नहीं बढ़ती। अतः जीवन में संयम चाहिए, चाहिए और चाहिए।

कब हँसना और कब एकाग्रचित्त होकर सत्संग सुनना, इसके लिए भी संयम चाहिए। कब ताली बजाना और कब नहीं बजाना इसके लिये भी संयम चाहिए। संयम ही सफलता का सोपान है। भगवान को पाना हो तो भी संयम ज़रूरी है। सिद्धि पाना हो तो भी संयम चाहिए और प्रसिद्धि पाना हो तो भी संयम चाहिए। संयम तो सबका मूल है। जैसे सब व्यञ्जनों का मूल पानी है, जीवन का मूल सूर्य है ऐसे ही जीवन के विकास का मूल संयम है।

गुरुजी तो कहकर चले गये कि "जब तक मैं न आऊँ तब तक आँखें नहीं खोलना।" थोड़ी देर में गुरुकुल का रिसेस हुआ। सब बच्चे आये। मन हुआ कि देखें कौन हैं, क्या हैं? फिर याद आया कि संयम। थोड़ी देर बाद पुनः कुछ बच्चों को मेरे पास भेजा गया। वे लोग मेरे आस–पास खेलने लगे, कबड्डी–कबड्डी की आवाज भी सुनी। मेरी देखने की इच्छा हुई परन्तु मुझे याद आया कि संयम॥

मेरे मन की शक्ति बढ़ाने का पहला प्रयोग हो गया, संयम। मेरी स्मरणशक्ति बढ़ाने की पहली कुँजी मिल गई, संयम। मेरे जीवन को महान बनाने की प्रथम कृपा गुरुजी द्वारा हुई ? संयम। ऐसे महान गुरु की कसौटी से उस पाँच वर्ष की छोटी–सी वय में पार होना था। अगर मैं अनुत्तीर्ण हो जाता तो फिर घर पर, मेरे

पिताजी मुझे बहुत छोटी दृष्टि से देखते।

सब बच्चे खेल कर चले गये किन्तु मैंने आँखें नहीं खोलीं। थोड़ी देर के बाद गुड़ और शक्कर की चासनी बनाकर मेरे आसपास उड़ेल दी गई। मेरे घुटनों पर, मेरी जाँघ पर भी चासनी की कुछ बूँदें डाल दी गईं। जी चाहता था कि आँखें खोलकर देखूँ कि अब क्या होता है? फिर गुरुजी की आज्ञा याद आयी कि 'आँखें मत खोलना।' अपनी आँख पर, अपने मन पर संयम। शरीर पर चींटियाँ चलने लगीं। लेकिन याद था कि पास होने के लिए 'संयम' ज़रूरी है।

तीन घंटे बीत गये, तब गुरुजी आये और बड़े प्रेम से बोलेः "पुत्र उठो, उठो। तुम इस परीक्षा में उत्तीर्ण रहे। शाबाश है तुम्हें।"

ऐसा कहकर गुरुजी ने स्वयं अपने हाथों से मुझे उठाया। गुरुकुल में प्रवेश मिल गया। गुरु के आश्रम में प्रवेश अर्थात भगवान के राज्य में प्रवेश मिल गया। फिर गुरु की आज्ञा के अनुसार कार्य करते-करते इस ऊँचाई तक पहुँच गया।

इस प्रकार मुझे महान बनाने में मुख्य भूमिका संयम की ही रही है। यदि बाल्यकाल से ही पिता की आज्ञा को न मान कर संयम का पालन न करता तो आज न जाने कहाँ होता? सचमुच संयम में अदभुत सामर्थ्य है। संयम के बल पर दुनिया के सारे कार्य संभव हैं जितने भी महापुरुष, संतपुरुष इस दुनिया में हो चुके हैं या हैं, उनकी महानता के मूल में उनका संयम ही है।

वृक्ष के मूल में उसका संयम है। इसी से उसके पत्ते हरे-भरे हैं, फूल खिलते हैं, फल लगते हैं और वह छाया देता है। वृक्ष का मूल अगर संयम छोड़ दे तो पत्ते सूख जायेंगे, फूल कुम्हला जाएंगे, फल नष्ट हो जाएंगे, वृक्ष का जीवन बिखर जायेगा।

वीणा के तार संयत हैं। इसी से मधुर स्वर गूँजता है। अगर वीणा के तार ढीले कर दिये जायें तो वे मधुर स्वर नहीं अलापते।

रेल के इंजन में वाष्प संयत है तो हजारों यात्रियों को दूर सूदूर की यात्रा कराने में वह वाष्प सफल होती है। अगर वाष्प का संयम टूट जाये, इधर-उधर बिखर जाये तो? रेलगाड़ी दौड़ नहीं सकती। ऐसे ही हे मानव! महान बनने की शर्त यही है ? संयम, सदाचार। हजार बार असफल होने पर भी फिर से पुरुषार्थ कर, अवश्य सफलता मिलेगी। हिम्मत न हार। छोटा-छोटा संयम का व्रत आजमाते हुए आगे बढ़ और महान हो जा।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

त्रिकाल संध्या

जीवन को यदि तेजस्वी बनाना हो, सफल बनाना हो, उन्नत बनाना हो तो मनुष्य को त्रिकाल संध्या ज़रूर करनी चाहिए। प्रातःकाल सूर्योदय से दस मिनट पहले और दस मिनट बाद में, दोपहर को बारह बजे के दस मिनट पहले और दस मिनट बाद में तथा सायंकाल को सूर्यास्त के पाँच-दस मिनट पहले और बाद में, यह समय संधि का होता है। इस समय किया हुआ प्राणायाम, जप और ध्यान बहुत लाभदायक होता है जो मनुष्य सुषुम्ना के द्वार को खोलने में भी सहयोगी होता है। सुषुम्ना का द्वार खुलते ही मनुष्य की छुपी हुई शक्तियाँ जाग्रत होने लगती हैं।

प्राचीन ऋषि-मुनि त्रिकाल संध्या किया करते थे। भगवान वशिष्ट भी त्रिकाल संध्या करते थे और भगवान राम भी त्रिकाल संध्या करते थे। भगवान राम दोपहर को संध्या करने के बाद ही भोजन करते थे।

संध्या के समय हाथ–पैर धोकर, तीन चुल्लू पानी पीकर फिर संध्या में बैठें और प्राणायाम करें जप करें तो बहुत अच्छा। अगर कोई आफिस में है तो वहीं मानसिक रूप से कर लें तो भी ठीक है। लेकिन प्राणायाम, जप और ध्यान करें ज़रूर।

जैसे उद्योग करने से, पुरुषार्थ करने से दरिद्रता नहीं रहती, वैसे ही प्राणायाम करने से पाप कटते हैं। जैसे प्रयत्न करने से धन मिलता है, वैसे ही प्राणायाम करने से आंतरिक सामर्थ्य, आंतरिक बल मिलता है। छांदोग्य उपनिषद में लिखा है कि जिसने प्राणायाम करके मन को पवित्र किया है उसे ही गुरु के आखिरी उपदेश का रंग लगता है और आत्म–परमात्मा का साक्षात्कार हो जाता है।

मनुष्य के फेफड़ों में तीन हजार छोटे–छोटे छिद्र होते हैं। जो लोग साधारण रूप से श्वास लेते हैं उनके फेफड़ों के केवल तीन सौ से पाँच सौ तक के छिद्र ही काम करते हैं, बाकी के बंद पड़े रहते हैं, जिससे शरीर की रोग प्रतिकारक शक्ति कम हो जाती है। मनुष्य जल्दी बीमार और बूढ़ा हो जाता है। व्यसनों एवं बुरी आदतों के कारण भी शरीर की शक्ति जब शिथिल हो जाती है, रोग–प्रतिकारक शक्ति कमजोर हो जाती है तो छिद्र बंद पड़े होते हैं उनमें जीवाणु पनपते हैं और शरीर पर हमला कर देते हैं जिससे दमा और टी.बी. की बीमारी होने की संभावना बढ़ जाती है।

परन्तु जो लोग गहरा श्वास लेते हैं, उनके बंद छिद्र भी खुल जाते हैं। फलतः उनमें कार्य करने की क्षमता भी बढ़ जाती है तथा रक्त शुद्ध होता है, नाड़ी भी शुद्ध रहती है, जिससे मन भी प्रसन्न रहता है। इसीलिए सुबह, दोपहर और शाम को संध्या के समय प्राणायाम करने का विधान है। प्राणायाम से मन पवित्र होता है, एकाग्र होता है जिससे मनुष्य में बहुत बड़ा सामर्थ्य आता है।

यदि मनुष्य दस–दस प्राणायाम तीनों समय करे और शराब, माँस, बीड़ी व अन्य व्यसनों एवं फैशनों में न पड़े तो चालीस दिन में तो मनुष्य को अनेक अनुभव होने लगते हैं। केवल चालीस दिन प्रयोग करके देखिये, शरीर का स्वास्थ्य बदला हुआ मिलेगा, मन बदला हुआ मिलेगा, जठरा प्रदीप्त होगी, आरोग्यता एवं प्रसन्नता बढ़ेगी और स्मरण शक्ति में जादुई विकास होगा।

प्राणायाम से शरीर के कोषों की शक्ति बढ़ती है। इसीलिए ऋषि–मुनियों ने त्रिकाल संध्या की व्यवस्था की थी। रात्रि में अनजाने में हुए पाप सुबह की संध्या से दूर होते हैं। सुबह से दोपहर तक के दोष दोपहर की संध्या से और दोपहर के बाद अनजाने में हुए पाप शाम की संध्या करने से नष्ट हो जाते हैं तथा अंतःकरण पवित्र होने लगता है।

आजकल लोग संध्या करना भूल गये हैं, निद्रा के सुख में लगे हुए हैं। ऐसा करके वे अपनी जीवन शक्ति को नष्ट कर डालते हैं।

प्राणायाम से जीवन शक्ति का, बौद्धिक शक्ति का एवं स्मरण शक्ति का विकास होता है। स्वामी रामतीर्थ प्रातःकाल में जल्दी उठते, थोड़े प्राणायाम करते और फिर प्राकृतिक वातावरण में घूमने जाते। परमहंस योगानंद भी ऐसा करते थे।

स्वामी रामतीर्थ बड़े कुशाग्र बुद्धि के विद्यार्थी थे। गणित उनका प्रिय विषय था। जब वे पढ़ते थे, उनका नाम तीर्थराम था। एक बार परीक्षा में १३ प्रश्न दिये गये जिसमें से केवल ९ हल करने थे। तीर्थराम ने १३ के १३ प्रश्न हल कर दिये और नीचे एक टिप्पणी (नोट) लिख दी, ' १३ के १३ प्रश्न सही हैं। कोई भी ९ जाँच लो।', इतना दृढ़ था उनका आत्मविश्वास।

प्राणायाम के अनेक लाभ हैं। संध्या के समय किया हुआ प्राणायाम, जप और ध्यान अनंत गुणा फल देता है। अमिट पुण्यपुंज देने वाला होता है। संध्या के समय हमारी सब नाड़ियों का मूल आधार जो सुषुम्ना नाड़ी है, उसका द्वार खुला होता है। इससे जीवन शक्ति, कुण्डलिनी शक्ति के जागरण में सहयोग मिलता है। उस समय किया हुआ ध्यान–भजन पुण्यदायी होता है, अधिक हितकारी और उन्नति करने वाला होता है। वैसे

तो ध्यान–भजन कभी भी करो, पुण्यदायी होता ही है, किन्तु संध्या के समय उसका प्रभाव और भी बढ़ जाता है। त्रिकाल संध्या करने से विद्यार्थी भी बड़े तेजस्वी होते हैं।

अतएव जीवन के सर्वांगीण विकास के लिए मनुष्यमात्र को त्रिकाल संध्या का सहारा लेकर अपना नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक उत्थान करना चाहिए।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

शरीर स्वास्थ्य

लोकमान्य तिलक जब विद्यार्थी अवस्था में थे तो उनका शरीर बहुत दुबला पतला और कमजोर था, सिर पर फोड़ा भी था। उन्होंने सोचा कि मुझे देश की आजादी के लिए कुछ काम करना है, माता–पिता एवं समाज के लिए कुछ करना है तो शरीर तो मजबूत होना ही चाहिए और मन भी दृढ होना चाहिए, तभी मैं कुछ कर पाऊँगा। अगर ऐसा ही कमजोर रहा तो पढ़–लिखकर प्राप्त किये हुए प्रमाण–पत्र भी क्या काम आयेंगे?

जो लोग सिकुड़कर बैठते हैं, झुककर बैठते हैं, उनके जीवन में बहुत बरकत नहीं आती। जो सीधे होकर, स्थिर होकर बैठते हैं उनकी जीवन–शक्ति ऊपर की ओर उठती है। वे जीवन में सफलता भी प्राप्त करते हैं।

तिलक ने निश्चय किया कि भले ही एक साल के लिए पढ़ाई छोड़नी पड़े तो छोड़ूँगा लेकिन शरीर और मन को सुदृढ़ बनाऊँगा। तिलक यह निश्चय करके शरीर को मजबूत और मन को निर्भीक बनाने में जुट गये। रोज़ सुबह–शाम दौड़ लगाते, प्राणायाम करते, तैरने जाते, मालिश करते तथा जीवन को संयमी बनाकर ब्रह्मचर्य की शिक्षावाली 'यौवन सुरक्षा' जैसी पुस्तकें पढ़ते। सालभर में तो अच्छा गठीला बदन हो गया। पढ़ाई–लिखाई में भी आगे और लोक–कल्याण में भी आगे। राममूर्ति को सलाह दी तो राममूर्ति ने भी उनकी सलाह स्वीकार की और पहलवान बन गये।

बाल गंगाधर तिलक के विद्यार्थी जीवन के संकल्प को आप भी समझ जाना और अपने जीवन में लाना कि 'शरीर सुदृढ़ होना चाहिए, मन सुदृढ़ होना चाहिए।' तभी मनुष्य मनचाही सफलता अर्जित कर सकता है।

तिलक जी से किसी ने पूछाः "आपका व्यक्तित्व इतना प्रभावशाली कैसे है? आपकी ओर देखते हैं तो आपके चेहरे से अध्यात्म, एकाग्रता और तरुणाई की तरलता दिखाई देती है। 'स्वराज्य मेरा जन्मसिद्ध अधिकार है' ऐसा जब बोलते हैं तो लोग दंग रह जाते हैं कि आप विद्यार्थी हैं, युवक हैं या कोई तेजपुंज हैं! आपका ऐसा तेजोमय व्यक्तित्व कैसे बना?"

तब तिलक ने जवाब दियाः "मैंने विद्यार्थी जीवन से ही अपने शरीर को मजबूत और दृढ़ बनाने का प्रयास किया था। सोलह साल से लेकर इक्कीस साल तक की उम्र में शरीर को जितना भी मजबूत बनाना चाहे और जितना भी विकास करना चाहे, हो सकता है।"

इसीलिए विद्यार्थी जीवन में इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि सोलह से इक्कीस साल तक की उम्र शरीर और मन को मजबूत बनाने के लिए है।

मैं (परम पूज्य गुरुदेव आसारामजी बापू) जब चौदह–पन्द्रह वर्ष का था, तब मेरा कद बहुत छोटा था।

लोग मुझे 'टेंणी' (ठिंगू) कहकर बुलाते तो मुझे बुरा लगता। स्वाभिमान तो होना ही चाहिए। 'टेंणी' ऐसा नाम ठीक नहीं है। वैसे तो विद्यार्थी-काल में भी मेरा हँसमुखा स्वभाव था, इससे शिक्षकों ने मेरा नाम 'आसुमल' के बदले 'हँसमुखभाई' ऱख दिया था। लेकिन कद छोटा था तो किसी ने 'टेंणी' कह दिया, जो मुझे बुरा लगा। दुनिया में सब कुछ संभव है तो 'टेंणी' क्यों रहना? मैं कांकरिया तालाब पर दौड़ लगाता, 'पुल्लअप्स' करता और ३०-४० ग्राम मक्खन में एक-दो ग्राम कालीमिर्च के टुकड़े डालकर निगल जाता। चालीस दिन तक ऐसा प्रयोग किया। अब मैं उस व्यक्ति से मिला जिसने ४० दिन पहल 'टेंणी' कहा था, तो वह देखकर दंग रह गया।

आप भी चाहो तो अपने शरीर को स्वस्थ रख सकते हो। शरीर को स्वस्थ रखने के कई तरीके हैं। जैसे धन्वन्तरी के आरोग्यशास्त्र में एक बात आती है - 'उषःपान।'

'उषःपान' अर्थात सूर्योदय के पहले या सूर्योदय के समय रात का रखा हुआ पानी पीना। इससे आँतों की सफाई होती है, अजीर्ण दूर होता है तथा स्वास्थ्य की भी रक्षा होती है। उसमें आठ चुल्लू भरकर पानी पीने की बात आयी है। आठ चुल्लू पानी यानि कि एक गिलास पानी। चार-पाँच तुलसी के पत्ते चबाकर, सूर्योदय के पहले पानी पीना चाहिए। तुलसी के पत्ते सूर्योदय के बाद तोड़ने चाहिए, वे सात दिन तक बासी नहीं माने जाते।

शरीर तन्दरुस्त होना चाहिए। रगड़-रगड़कर जो नहाता है और चबा-चबाकर खाता है, जो परमात्मा का ध्यान करता है और सत्संग में जाता है, उसका बेड़ा पार हो जाता है।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

अन्न का प्रभाव

हमारे जीवन के विकास में भोजन का अत्यधिक महत्त्व है। वह केवल हमारे तन को ही पुष्ट नहीं करता वरन् हमारे मन को, हमारी बुद्धि को, हमारे विचारों को भी प्रभावित करता है। कहते भी हैः

जैसा खाओ अन्न वैसा होता है मन।

महाभारत के युद्ध में पहले, दूसरे, तीसरे और चौथे दिन केवल कौरव-कुल के लोग ही मरते रहे। पांडवों के एक भी भाई को जरा-सी भी चोट नहीं लगी। पाँचवाँ दिन हुआ। आखिर दुर्योधन को हुआ कि हमारी सेना में भीष्म पितामह जैसे योद्धा हैं फिर भी पांडवों का कुछ नहीं बिगड़ता, क्या कारण है? वे चाहें तो युद्ध में क्या से क्या कर सकते हैं। विचार करते-करते आखिर वह इस निष्कर्ष पर आया कि भीष्म पितामह पूरा मन लगाकर पांडवों का मूलोच्छेद करने को तैयार नहीं हुए हैं। इसका क्या कारण है? यह जानने के लिए सत्यवादी युधिष्ठिर के पास जाना चाहिए। उससे पूछना चाहिए कि हमारे सेनापति होकर भी वे मन लगाकर युद्ध क्यों नहीं करते?

पांडव तो धर्म के पक्ष में थे। अतः दुर्योधन निःसंकोच पांडवों के शिविर में पहुँच गया। वहाँ पर पांडवों ने यथायोग्य आवभगत की। फिर दुर्योधन बोलाः

"भीम, अर्जुन, तुम लोग जरा बाहर जाओ। मुझे केवल युधिष्ठिर से बात करनी है।"

चारों भाई युधिष्ठिर के शिविर से बाहर चले गये फिर दुर्योधन ने युधिष्ठिर से पूछाः

"युधिष्ठिर महाराज! पाँच-पाँच दिन हो गये हैं। हमारे कौरव-पक्ष के लोग ही मर रहे हैं किन्तु आप लोगों का बाल तक बाँका नहीं होता, क्या बात है? चाहें तो देवव्रत भीष्म तूफान मचा सकते हैं।"

युधिष्ठिरः "हाँ, मचा सकते हैं।"

दुर्योधनः "वे चाहें तो भीषण युद्ध कर सकते हैं पर नहीं कर रहे हैं। क्या आपको लगता है कि वे मन लगाकर युद्ध नहीं कर रहे हैं?"

सत्यवादी युधिष्ठिर बोलेः "हाँ, गंगापुत्र भीष्म मन लगाकर युद्ध नहीं कर रहे हैं।"

दुर्योधनः "भीष्म पितामह मन लगाकर युद्ध नहीं कर रहे हैं इसका क्या कारण होगा?"

युधिष्ठिरः "वे सत्य के पक्ष में हैं। वे पवित्र आत्मा हैं अतः समझते हैं कि कौन सच्चा है और कौन झूठा। कौन धर्म में है तथा कौन अधर्म में। वे धर्म के पक्ष में हैं इसलिए उनका जी चाहता है कि पांडव पक्ष की ज्यादा खून–खराबा न हो क्योंकि वे सत्य के पक्ष में हैं।"

दुर्योधनः "वे मन लगाकर युद्ध करें इसका उपाय क्या है?"

युधिष्ठिरः "यदि वे सत्य – धर्म का पक्ष छोड़ देंगे, उनका मन गलत जगह हो जाएगा, तो फिर वे युद्ध करेंगे।"

दुर्योधनः "उनका मन युद्ध में कैसे लगे?"

युधिष्ठिरः "यदि वे किसी पापी के घर का अन्न खायेंगे तो उनका मन युद्ध में लग जाएगा।"

दुर्योधनः "आप ही बताइये कि ऐसा कौन सा पापी होगा जिसके घर का अन्न खाने से उनका मन सत्य के पक्ष से हट जाये और वे युद्ध करने को तैयार हो जायें?"

युधिष्ठिरः "सभा में भीष्म पितामह, गुरु द्रोणाचार्य जैसे महान लोग बैठे थे फिर भी द्रौपदी को नग्न करने की आज्ञा और जाँघ ठोकने की दुष्टता तुमने की थी। ऐसा धर्म–विरुद्ध और पापी आदमी दूसरा कहाँ से लाया जाये? तुम्हारे घर का अन्न खाने से उनकी मति सत्य और धर्म के पक्ष से नीचे जायेगी, फिर वे मन लगाकर युद्ध करेंगे।"

दुर्योधन ने युक्ति पा ली। कैसे भी करके, कपट करके, अपने यहाँ का अन्न भीष्म पितामह को खिला दिया। भीष्म पितामह का मन बदल गया और छठवें दिन से उन्होंने घमासान युद्ध करना आरंभ कर दिया।

कहने का तात्पर्य यह है कि जैसा अन्न होता है वैसा ही मन होता है। भोजन करें तो शुद्ध भोजन करें। मलिन और अपवित्र भोजन न करें। भोजन के पहले हाथ–पैर जरुर धोयें। भोजन सात्विक हो, पवित्र हो, प्रसन्नता देने वाला हो, तन्दरुस्ती बढ़ाने वाला हो।

आहारशुद्धौ सत्त्वशुद्धिः।

फिर भी ठूँस–ठूँस कर भोजन न करें। चबा–चबाकर ही भोजन करें। भोजन के समय शांत एवं प्रसन्नचित्त रहें। प्रभु का स्मरण कर भोजन करें। जो आहार खाने से हमारा शरीर तन्दुरुस्त रहता हो वही आहार करें और जिस आहार से हानि होती हो ऐसे आहार से बचें। खान–पान में संयम से बहुत लाभ होता है।

भोजन मेहनत का हो, सात्त्विक हो। लहसुन, प्याज, मांस आदि और ज्यादा तेल–मिर्च–मसाले वाला न हो, उसका निमित्त अच्छा हो और अच्छे ढंग से, प्रसन्न होकर, भगवान को भोग लगाकर फिर भोजन करें तो उससे आपका भाव पवित्र होगा। रक्त के कण पवित्र होंगे, मन पवित्र होगा। फिर संध्या–प्राणायाम करेंगे तो मन में सात्विकता बढ़ेगी। मन में प्रसन्नता, तन में आरोग्यता का विकास होगा। आपका जीवन उन्नत होता जायेगा।

मेहनत मजदूरी करके, विलासी जीवन बिताकर या कायर होकर जीने के लिये ज़िंदगी नहीं है। ज़िंदगी तो चैतन्य की मस्ती को जगाकर परमात्मा का आनन्द लेकर इस लोक और परलोक में सफल होने के लिए है। मुक्ति का अनुभव करने के लिए ज़िंदगी है।

भोजन स्वास्थ्य के अनुकूल हो, ऐसा विचार करके ही ग्रहण करें। तथाकथित वनस्पति घी की अपेक्षा तेल खाना अधिक अच्छा है। वनस्पति घी में अनेक रासायनिक पदार्थ डाले जाते हैं जो स्वास्थ्य के लिए हितकर नहीं होते हैं।

एल्युमीनियम के बर्तन में खाना यह पेट को बीमार करने जैसा है। उससे बहुत हानि होती है। कैन्सर

तक होने की सम्भावना बढ़ जाती है। ताँबे, पीतल के बर्तन कलई किये हुए हों तो अच्छा है। एल्युमीनियम के बर्तन में रसोई नहीं बनानी चाहिए। एल्यूमीनियम के बर्तन में खाना भी नहीं चाहिए।

आजकल अण्डे खाने का प्रचलन समाज में बहुत बढ़ गया है। अतः मनुष्यों की बुद्धि भी वैसी ही हो गयी है। वैज्ञानिकों ने अनुसंधान करके बताया है कि २०० अण्डे खाने से जितना विटामिन 'सी' मिलता है उतना विटामिन 'सी' एक नारंगी (संतरा) खाने से मिल जाता है। जितना प्रोटीन, कैल्शियम अण्डे में है उसकी अपेक्षा चने, मूँग, मटर में ज़्यादा प्रोटीन है। टमाटर में अण्डे से तीन गुणा कैल्शियम ज़्यादा है। केले में से कैलौरी मिलती है। और भी कई विटामिन्स केले में हैं।

जिन प्राणियों का मांस खाया जाता है उनकी हत्या करनी पड़ती है। जिस वक्त उनकी हत्या की जाती है उस वक्त वे अधिक से अधिक अशांत, खिन्न, भयभीत, उद्विग्न और क्रुद्ध होते हैं। अतः मांस खाने वाले को भी भय, क्रोध, अशांति, उद्वेग इस आहार से मिलता है। शाकाहारी भोजन में सुपाच्य तंतु होते हैं, मांस में वे नहीं होते। अतः मांसाहारी भोजन को पचाने में जीवन शक्ति का ज़्यादा व्यय होता है। स्वास्थ्य के लिये एवं मानसिक शांति आदि के लिए पुण्यात्मा होने की दृष्टि से भी शाकाहारी भोजन ही करना चाहिए।

शरीर को स्थूल करना कोई बड़ी बात नहीं है और न ही इसकी ज़रूरत है, लेकिन बुद्धि को सूक्ष्म करने की ज़रूरत है। आहार यदि सात्त्विक होगा तो बुद्धि भी सूक्ष्म होगी। इसलिए सदैव सात्त्विक भोजन ही करना चाहिए।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

भारतीय संस्कृति की महानता

रेवरन्ड ऑवर नाम का एक पादरी पूना में हिन्दू धर्म की निन्दा और ईसाइयत का प्रचार कर रहा था। तब किसी सज्जन ने एक बार रेवरन्ड ऑवर से कहाः

"आप हिन्दू धर्म की इतनी निन्दा करते हो तो क्या आपने हिन्दू धर्म का अध्ययन किया है? क्या भारतीय संस्कृति को पूरी तरह से जानने की कोशिश की है? आपने कभी हिन्दू धर्म को समझा ही नहीं, जाना ही नहीं है। हिन्दू धर्म में तो ऐसे जप, ध्यान और सत्संग की बाते हैं कि जिन्हें अपनाकर मनुष्य बिना विषय-विकारी के, बिना डिस्को डांस(नृत्य) के भी आराम से रह सकता है, आनंदित और स्वस्थ रह सकता है। इस लोक और परलोक दोनों में सुखी रह सकता है। आप हिन्दू धर्म को जाने बिना उसकी निंदा करते हो, यह ठीक नहीं है। पहले हिन्दू धर्म का अध्ययन तो करो।"

रेवरन्ड ऑवर ने उस सज्जन की बात मानी और हिन्दू धर्म की पुस्तकों को पढ़ने का विचार किया। एकनाथजी और तुकारामजी का जीवन चरित्र, ज्ञानेश्वर महाराज की योग सामर्थ्य की बातें और कुछ धार्मिक पुस्तकें पढ़ने से उसे लगा कि भारतीय संस्कृति में तो बहुत खजाना है। मनुष्य की प्रज्ञा को दिव्य करने की, मन को प्रसन्न करने की और तन के रक्तकणों को भी बदलने की इस संस्कृति में अदभुत व्यवस्था है। हम नाहक ही इन भोले-भाले हिन्दुस्तानियों को अपने चंगुल में फँसाने के लिए इनका धर्मपरिवर्तन करवाते हैं। अरे! हम स्वयं तो अशान्ति की आग में जल ही रहे हैं और इन्हें भी अशांत कर रहे हैं।

उसने प्रायश्चित्त-स्वरूप अपनी मिशनरी को त्यागपत्र लिख भेजाः "हिन्दुस्तान में ईसाइयत फैलाने की कोई ज़रूरत नहीं है। हिन्दू संस्कृति की इतनी महानता है, विशेषता है कि ईसाईयों को चाहिए कि उसकी महानता एवं सत्यता का फायदा उठाकर अपने जीवन को सार्थक बनाये। हिन्दू धर्म की सत्यता का फायदा देश-

विदेश में पहुँचे, मानव जाति को सुख–शांति मिले, इसका प्रयास हमें करना चाहिए।

मैं 'भारतीय इतिहास संशोधन मण्डल' के मेरे आठ लाख डॉलर भेंट करता हूँ और तुम्हारी मिशनरी को सदा के लिए त्यागपत्र देकर भारतीय संस्कृति की शरण में जाता हूँ।"

जैसे रेवरण्ड ऑवर ने भारतीय संस्कृति का अध्ययन किया, ऐसे और लोगों को भी, जो हिन्दू धर्म की निंदा करते हैं, भारतीय संस्कृति का पक्षपात और पूर्वाग्रहरहित अध्ययन करना चाहिए, मनुष्य की सुषुप्त शक्तियाँ व आनंद जगाकर, संसार में सुख–शांति, आनंद, प्रसन्नता का प्रचार–प्रसार करना चाहिए।

माँ सीता की खोज करते–करते हनुमान, जाम्बवंत, अंगद आदि स्वयंप्रभा के आश्रम में पहुँचे। उन्हें जोरों की भूख और प्यास लगी थी। उन्हें देखकर स्वयंप्रभा ने कह दिया किः

"क्या तुम हनुमान हो? श्रीरामजी के दूत हो? सीता जी की खोज में निकले हो?"

हनुमानजी ने कहाः "हाँ, माँ! हम सीता माता की खोज में इधर तक आये हैं।"

फिर स्वयंप्रभा ने अंगद की ओर देखकर कहाः

"तुम सीता जी को खोज तो रहे हो, किन्तु आँखें बंद करके खोज रहे हो या आँखें खोलकर?"

अंगद जरा राजवी पुरुष था, बोलाः "हम क्या आँखें बन्द करके खोजते होंगे? हम तो आँखें खोलकर ही माता सीता की खोज कर रहे हैं।"

स्वयंप्रभा बोलीः "सीताजी को खोजना है तो आँखें खोलकर नहीं बंद करके खोजना होगा। सीता जी अर्थात् भगवान की अर्धांगिनी, सीताजी यानी ब्रह्मविद्या, आत्मविद्या। ब्रह्मविद्या को खोजना है तो आँखें खोलकर नहीं आँखें बंद करके ही खोजना पड़ेगा। आँखें खोलकर खोजोगे तो सीताजी नहीं मिलेंगीं। तुम आँखें बन्द करके ही सीताजी (ब्रह्मविद्या) को पा सकते हो। ठहरो मैं तुम्हे बताती हूँ कि सीता जी कहाँ हैं।"

ध्यान करके स्वयंप्रभा ने बतायाः "सीताजी यहाँ कहीं भी नहीं, वरन् सागर पार लंका में हैं। अशोकवाटिका में बैठी हैं और राक्षसियों से घिरी हैं। उनमें त्रिजटा नामक राक्षसी है तो रावण की सेविका, किन्तु सीताजी की भक्त बन गयी है। सीताजी वहीं रहती हैं।"

वानर सोचने लगे कि भगवान राम ने तो एक महीने के अंदर सीता माता का पता लगाने के लिए कहा था। अभी तीन सप्ताह से ज़्यादा समय तो यहीं हो गया है। वापस क्या मुँह लेकर जाएँ? सागर तट तक पहुँचते–पहुँचते कई दिन लग जाएँगे। अब क्या करें?

उनके मन की बात जानकर स्वयंप्रभा ने कहाः "चिन्ता मत करो। अपनी आँखें बंद करो। मैं योगबल से एक क्षण में तुम्हें वहाँ पहुँचा देती हूँ।"

हनुमान, अंगद और अन्य वानर अपनी आँखें बन्द करते हैं और स्वयंप्रभा अपनी योगशक्ति से उन्हें सागर–तट पर कुछ ही पल मैं पहुँचा देती है।

श्रीरामचरितमानस में आया है कि –

ठाड़े सकल सिंधु के तीरा।

ऐसी है भारतीय संस्कृति की क्षमता।

अमेरिका को खोजने वाला कोलंबस पैदा भी नहीं हुआ था उससे पाँच हजार वर्ष पहले अर्जुन सशरीर स्वर्ग में गया था और दिव्य अस्त्र लाया था। ऐसी योग्यता थी कि धरती के राजा खटवांग देवताओं को मदद करने के लिए देवताओं का सेनापतिपद संभालते थे। प्रतिस्मृति–विद्या, चाक्षुषी विद्या, परकायाप्रवेश विद्या, अष्टसिद्धि विद्या एवं नवनिधि प्राप्त कराने वाली योगविद्या और जीते–जी जीव को ब्रह्म बनाने वाली ब्रह्मविद्या यह भारतीय संस्कृति की देन है, अन्य जगह यह नहीं मिलती भारतीय संस्कृति की जो लोग आलोचना करते हैं उन बेचारों को तो पता ही नहीं है कि भारतीय संस्कृति कितनी महान है।

गुरु तेगबहादुर बोलियो,

सुनो सीखो बड़भागियो,
धड़ दीजे धर्म न छोड़िये।

यवनों ने गुरु गोबिन्दसिंह के बेटों से कहाः "तुम लोग मुसलमान हो जाओ, नहीं तो हम तुम्हें ज़िन्दा ही दीवार में चुनवा देंगे।"

बेटे बोलेः "हम अपने प्राण दे सकते हैं लेकिन अपना धर्म नहीं त्याग सकते।"

क्रूरों ने उन दोनों को जीते-जी दीवार में चुनवा दिया। जब कारीगर उन्हें दीवार में चुनने लगे तब बड़ा भाई बोलता हैः "धर्म के नाम यदि हमें मरना ही पड़ता है तो पहले मेरी ओर ईंटें बढ़ा दो ताकि मैं छोटे भाई की मृत्यु न देखूँ।"

छोटा भाई बोलता हैः "नहीं पहले मेरी ओर ईंटें बढ़ा दो।"

क्या साहसी थे! क्या वीर थे! वीरता के साथ अपने जीवन का बलिदान कर दिया किन्तु धर्म न छोड़ा। आजकल के लोग तो अपने धर्म और संस्कृति को ही भूलते जा रहे हैं। कोई 'लवर-लवरी' धर्मपरिवर्तन करके 'लवमैरिज' करते हैं, अपना हिन्दू धर्म छोड़कर फँस मरते हैं, यह भी कोई ज़िन्दगी है? भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं ?

स्वधर्मे निधनं श्रेय परधर्मो भयावहः

अपने धर्म में मर जाना अच्छा है। पराया धर्म दुःख देने वाला है, भयावह है, नरकों में ले जाने वाला है। इसलिए अपने ही धर्म में, अपनी ही संस्कृति में जो जीता है उसकी शोभा है।

रेवरण्ड ऑवर ने भारतीय संस्कृति का खूब आदर किया। एफ. एच. मोलेम ने, महात्मा थोरो एवं अन्य कई पाश्चात्य चिन्तकों ने भी भारतीय संस्कृति का बहुत आदर किया है। उनके कुछ उदगार यहाँ प्रस्तुत हैः

"बाईबल का मैंने यथार्थ अभ्यास किया है। उसमें जो दिव्य लिखा है वह केवल गीता के उद्धरण के रूप में है। मैं ईसाई होते हुए भी गीता के प्रति इतना सारा आदर भाव इसलिए रखता हूँ कि जिन गूढ़ प्रश्नों का समाधान पाश्चात्य लोग अभी तक नहीं खोज पाये हैं उनका समाधान गीताग्रन्थ ने शुद्ध एवं सरल रीति से कर दिया है। उसमें कई सूत्र अलौकिक उपदेशों से भरपूर लगे इसीलिए गीता जी मेरे लिए साक्षात योगेश्वरी माता बन रही है। वह तो विश्व के तमाम धन से भी नहीं खरीदा जा सके ऐसा भारतवर्ष का अमूल्य खजाना है।"

एफ. एच. मोलेम (इंग्लैंड)

"प्राचीन युग की सर्व रमणीय वस्तुओं में गीता से श्रेष्ठ कोई वस्तु नहीं है। गीता में ऐसा उत्तम और सर्वव्यापी ज्ञान है कि उसके रचयिता देवता को असंख्य वर्ष हो गये फिर भी ऐसा दूसरा एक भी ग्रन्थ नहीं लिखा गया।"

महात्मा थोरो (अमेरिका)

"धर्म के क्षेत्र में अन्य सब देश दरिद्र हैं जबकि भारत इस विषय में अरबपति है।"

मार्क टवेन (यू.एस.ए.)

"इस पृथ्वी पर सर्वाधिक पूर्ण विकसित मानवप्रज्ञा कहाँ है और जीवन के महत्तम प्रश्नों के हल किसने खोजे हैं ऐसा अगर मुझसे पूछा जाए तो मैं अंगुलिनिर्देश करके कहूँगा कि भारत ने ही की है।"

मेक्समूलर (जर्मनी)

"वेदान्त जैसा ऊर्ध्वगामी एवं उत्थानकारी और एक भी धर्म या तत्त्वज्ञान नहीं है।"

शोपनहोअर (जर्मनी)

"विश्वभर में केवल भारत ही ऐसी श्रेष्ठ महान परम्पराएँ रखता है जो सदियों तक जीवित रही हैं।"

केनो (फ्रान्स)

"मनुष्य जाति के अस्तित्व के सबसे प्रारम्भिक दिनों से लेकर आज तक जीवित मनुष्य के तमाम स्वप्न अगर कहीं साकार हुए हों तो वह स्थान है भारत।"

रोमां रोलां (फ्राँस)

"भारत देश सम्पूर्ण मानव जाति की मातृभूमि है और संस्कृत यूरोप की सभी भाषाओं की जननी है। भारत हमारे तत्त्वज्ञान, गणितशास्त्र एवं जनतंत्र की जननी है। भारतमाता अनेक रूप से सभी की जननी है।"

विल डुरान्ट (यू.एस.ए.)

भारतीय संस्कृति की महानता का एहसास करने वाले इन सब विदेशी चिन्तकों को हम धन्यवाद देते हैं।

एक बार महात्मा थोरो सो रहे थे। इतने में उनका शिष्य एमर्सन आया। देखा कि वहाँ साँप और बिच्छू घूम रहे हैं। गुरुजी के जागने पर एमर्सन बोलाः

"गुरुदेव! यह जगह बड़ी खतरनाक है। मैं किसी सुरक्षित जगह पर आपकी व्यवस्था करवा देता हूँ।"

महात्मा थोरो बोलेः "नहीं, नहीं। चिन्ता करने की कोई ज़रूरत नहीं है। मेरे सिरहाने पर श्रीमदभगवदगीता है। भगवदगीता के ज्ञान के कारण तो मुझे साँप में, बिच्छू में, सबमें मेरा ही आत्मा-परमात्मा दिखता है। वे मुझे नहीं काटते हैं तो मैं कहीं क्यो जाऊँ?"

कितनी कहें गीता की महानता! यही है भारतीय संस्कृति की महिमा!! अदभुत है उसकी महानता! लाबयान है उसकी महिमा!!

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

हरिदास की हरिभक्ति

सात वर्षीय गौर वर्ण के गौरांग बड़े-बड़े विद्वान पंडितों से ऐसे-ऐसे प्रश्न करते थे कि वे दंग रह जाते थे। इसका कारण था गौरांग की हरिभक्ति। बड़े होकर उन्होंने लाखों लोगों को हरिभक्ति में रंग दिया।

जो हरिभक्त होता, हरि का भजन करता उसकी बुद्धि अच्छे मार्ग पर ही जाती है। लोभी व्यक्ति पैसों के लिए हंसता-रोता है, पद एवं कुर्सी के तो कितने ही लोग हँसते रोते हैं, परिवार के लिए तो कितने ही मोही हँसते रोते हैं किन्तु धन्य हैं वे, जो भगवान के लिए रोते हँसते हैं। भगवान के विरह में जिसे रोना आया है, भगवान के लिए जिसका हृदय पिघलता है ऐसे लोगों का जीवन सार्थक हो जाता है। भागवत में भगवान श्रीकृष्ण उद्धव से कहते हैं-

वाग गदगदा द्रवते यस्य चित्तं
रूदत्यभीक्ष्णं हसति क्वचिच्च।

विलज्ज उदगायति नृत्यते च
मदभक्तियुक्तो भुवनं पुनाति॥

'जिसकी वाणी गदगद हो जाती है, जिसका चित्त द्रवित हो जाता है, जो बार–बार रोने लगता है, कभी लज्जा छोड़कर उच्च स्वर से गाने लगता है, कभी नाचने लगता है ऐसा मेरा भक्त समग्र संसार को पवित्र करता है।' **(श्रीमदभागवतः ११.१४.२४)**

धन्य है वह मुसलमान बालक जो गौरांग के कीर्तन में आता है और जिसने गौरांग से मंत्रदीक्षा ली है।

उस मुसलमान बालक का नाम 'हरिदास' रखा गया। मुसलमान लोगों ने उस हरिभक्त हरिदास को फुसलाने की बहुत चेष्टा की, बहुत डराया कि, 'तू गौरांग के पास जाना छोड़े दे नहीं तो हम यह करेंगे, वह करेंगे।' किन्तु हरिदास बहका नहीं। उसका भय नष्ट हो गया था, दुर्मति दूर हो चुकी थी। उसकी सदबुद्धि और निष्ठा भगवान के ध्यान में लग गयी थी। 'भयनाशन दुर्मति हरण, कलि में हरि को नाम' यह नानक जी का वचन मानो उसके जीवन में साकार हो उठा था।

काज़ी ने षडयंत्र करके उस पर केस किया और फरमान जारी किया कि 'हरिदास को बेंत मारते–मारते बीच बाजार से ले जाकर यमुना में डाल दिया जाये।'

निर्भीक हरिदास ने बेंत की मार खाना स्वीकार किया किन्तु हरिभक्ति छोड़ना स्वीकार न किया। निश्चित दिन हरिदास को बेंत मारते हुए ले जाया जाने लगा। सिपाही बेंत मारता है तो हरिदास बोलता हैः "हरि बोल...।"

"हमको हरि बोल बुलवाता है? ये ले हरि बोल, हरि बोल।" (सटाक...सटाक)

सिपाही बोलते हैः "हम तुझे बेंत मारते हैं तो क्या तुझे पीड़ा नहीं होती? तू हमसे भी 'हरि बोल... हरि बोल' करवाना चाहता है?"

हरिदासः "पीड़ा तो शरीर को होती है। मैं तो आत्मा हूँ। मुझे तो पीड़ा नहीं होती। तुम भी प्यार से एक बार 'हरि बोल' कहो।"

सिपाहीः "हें! हम भी 'हरि बोल' कहें? हमसे 'हरि बोल' बुलवाता है? ले ये हरि बोल।" (सटाक)

हरिदास सोचता है कि बेंत मारते हुए भी तो ये लोग 'हरि बोल' कह रहे हैं। चलो, इनका कल्याण होगा। सिपाही बेंत मारते जाते हैं सटाक... सटाक... और हरिदास 'हरि बोल' बोलता भी जाता है, बुलवाता भी जाता है। हरिदास को कई बेंत पड़ने पर भी उसके चेहरे पर दुःख की रेखा तक नहीं खिंचती।

हवालदार पूछता हैः "हरिदास! तुझे बेंत पड़ने के बावजूद भी तेरी आँखों में चमक है, चेहरे पर धैर्य, शांति और प्रसन्नता झलक रही है। क्या बात है?"

हरिदासः "मैं बोलता हूँ 'हरि बोल' तब सिपाही क्रुद्ध होकर भी कहते हैः हें? हमसे भी बुलवाता है हरि बोल... हरि बोल... हरि बोल.... तो ले।' इस बहाने भी उनके मुँह से हरिनाम निकलता है। देर सवेर उनका भी कल्याण होगा। इसी से मेरे चित्त में प्रसन्नता है।"

धन्य है हरिदास की हरिभक्ति! क्रूर काज़ी के आदेश का पालन करते हुए सिपाही उसे हरिभक्ति से हिन्दू धर्म की दीक्षा से च्युत करने के लिए बेंत मारते हैं फिर भी वह निडर हरिभक्ति नहीं छोड़ता। 'हरि बोल' बोलना बंद नहीं करता।

वे मुसलमान सिपाही हरिदास को हिन्दू धर्म की दीक्षा के प्रभाव से, गौरांग के प्रभाव से दूर हटाना चाहते थे लेकिन वह दूर नहीं हटा, बेंत सहता रहा किन्तु 'हरि बोल' बोलना न छोड़ा। आखिरकार उन क्रूर सिपाहीयों ने हरिदास को उठाकर नदी में बहा दिया।

नदी में तो बहा दिया लेकिन देखो हरिनाम का प्रभाव! मानो यमुनाजी ने उसको गोद में ले लिया। डेढ़ मील तक हरिदास पानी में बहता रहा। वह शांतचित्त होकर, मानो उस पानी में नहीं, हरि की कृपा में बहता

हुआ दूर किसी गाँव के किनारे निकला। दूसरे दिन गौरांग की प्रभातफेरी में शामिल हो गया। लोग आश्चर्यचकित हो गये कि चमत्कार कैसे हुआ?

धन्य है वह मुसलमान युवक हरिदास जो हरि के ध्यान में, हरि के गान में, हरि के कीर्तन में गौरांग के साथ रहा। जैसे विवेकानन्द के साथ भगिनी निवेदिता ने भारत में, अध्यात्म-धर्म के प्रचार में लगकर अपना नाम अमर कर दिया, वैसे ही इस मुसलमान युवक ने हरिकीर्तन में, हरिध्यान में अपना जीवन धन्य कर दिया। दुर्जन लोग हरिदास का बाल तक न बाँका कर सके। जो सच्चे हृदय से भगवान का हो जाता है उसकी, हजारों शत्रु मिलकर भी कुछ हानि नहीं कर सकते तो उस क़ाज़ी की क्या ताकत थी?

लोगों ने जाकर क़ाज़ी से कहा कि आज हरिदास पुनः गौरांग की प्रभातफेरी में उपस्थित हो गया था। काजी अत्यन्त अहंकारी था। उसने एक नोटिस भेजा। एक आदेश चैतन्य महाप्रभु (गौरांग) को भेजा कि 'कल से तुम प्रभातफेरी नहीं निकाल सकते। तुम्हारी प्रभातफेरी पर बंदिश लगाई जाती है।'

गौरांग ने सोचा कि हम किसी का बुरा नहीं करते, किसी को कोई हानि नहीं पहुँचाते। अरे! वायुमण्डल के प्रदूषण को दूर करने के लिए तो शासन पैसे खर्च करता है। किन्तु विचारों के प्रदूषण को दूर करने के लिए हरिकीर्तन जैसा, हरिभक्ति जैसा अमोघ उपाय कौन सा है? भले काजी और शासन की समझ में आये या न आये। वातावरण को शुद्ध करने के साथ-साथ विचारों का प्रदूषण भी दूर होना चाहिए। हम तो कीर्तन करेंगे और करवायेंगे।

जो लोग डरपोक थे, भीरु और कायर थे, ढीले-ढाले थे वे बोलेः "बाबा जी! रहने दो, रहने दो। अपना क्या? जो करेंगे वे भरेंगे। अपन तो घर में ही रहकर 'हरि ॐ.... हरि ॐ' करेंगे।"

गौरांग ने कहाः "नहीं, इस प्रकार कायरों जैसी बात करना है तो हमारे पास मत आया करो।"

दूसरे दिन जो डरपोक थे ऐसे पाँच-दस व्यक्ति नहीं आये, बाकी के हिम्मतवाले जितने थे वे सब आये। उन्हें देखकर और लोग भी जुड़े।

गौरांग बोलेः "आज हमारी प्रभातफेरी की पूर्णाहूति काजी के घर पर ही होगी।"

गौरांग भक्त-मण्डली के साथ कीर्तन करते-करते जब बाजार से गुज़रे तो कुछ हिन्दू एवं मुसलमान भी कीर्तन में जुड़ गये। उनको भी कीर्तन में रस आने लगा। वे लोग काजी को गालियाँ देने लगे कि 'काजी बदमाश है, ऐसा है, वैसा है...' आदि ? आदि।

तब गौरांग कहते हैः "नहीं शत्रु के लिए भी बुरा मत सोचो।"

उन्होंने सबको समझा दिया कि काजी के लिए कोई भी अपशब्द नहीं कहेगा। कैसी महान है हमारी हिन्दू संस्कृति! जिसने हरिदास को बेंत मारने का आदेश दिया उसे केवल अपशब्द कहने के लिए भी गौरांग मना कर रहे हैं। इस भारतीय संस्कृति में कितनी उदारता है, सहृदयता है। लेकिन कायरता को कहीं भी स्थान नहीं है।

गौरांग कीर्तन करते-करते काजी के घर के निकट पहुँच गये। काजी घर की छत पर से इस प्रभातफेरी को देखकर दंग रह गया कि मेरे मना करने पर भी इन्होंने प्रभातफेरी निकाली और मेरे घर तक ले आये। उसमें मुसलमान लड़के भी शामिल हैं। ज्यों ही वह प्रभातफेरी काजी के घर पहुँची, काजी घर के अन्दर छिप गया।

गौरांग ने काजी का द्वार खटखटाया, तब काजी या काजी की पत्नी ने नहीं, वरन् चौकीदार ने दरवाजा खोला। वह बोलाः

"काजी साहब घर पर नहीं हैं।"

गौरांग बोलेः "नहीं कैसे हैं? अभी तो हमने उन्हें घर की छत पर देखा था। काजी को जाकर बोलो हमारे मामा और माँ भी जिस गाँव की है आप भी उसी गाँव के हो इसलिए आप मेरे गाँव के मामा लगते हैं। मामाजी! भानजा द्वार पर आये और आप छुप कर बैठें, यह शोभा नहीं देता। बाहर आ जाईये।"

चौकीदार ने जाकर काजी को सब कह सुनाया। गौरांग के प्रेमभरे वचन सुनकर काजी का हृदय पिघल गया। 'जिस पर मैंने जुल्म ढाये वह मुझे मामा कहकर संबोधित करता है। जिसके साथ मैंने क्रूरता की वह मेरे साथ कितना औदार्य रखता है।' यह सोचकर काजी का हृदय बदल गया। वह द्वार पर आकर बोलाः

"मैं तुमसे डरकर अन्दर नहीं छुपा क्योंकि मेरे पास तो सत्ता है, कलम की ताकत है। लेकिन हरिकीर्तन से, हरिनाम से हिन्दू तो क्या, मुसलमान लड़के भी आनंदित हो रहे हैं, उनका भी लहू पवित्र हो रहा है यह देखकर मुझे दुःख हो रहा है कि जिस नाम के उच्चारण से उनकी रग-रग पावन हो रही है उसी नाम के कारण मैंने हरिदास पर और तुम पर जुल्म किया। किसी के बहकावे में आकर तुम लोगों पर फरमान जारी किया। अब मैं किस मुँह से तुम्हारे सामने आता? इसीलिए मैं मुँह छिपाकर घर के अन्दर घुस गया था।"

भानजा(गौरांग) बोलता हैः "मामा! अब तो बाहर आ जाइये।"

मामा(काजी) बोलाः "बाहर आकर क्या करूँ?"

गौरांगः "कीर्तन करें। हरिनाम के उच्चारण से छुपी हुई योग्यता विकसित करें, आनंद प्रगट करें।"

काजीः "क्या करना होगा?"

गौरांगः "मैं जैसा बोलता हूँ ऐसा ही बोलना होगा। बोलिएः हरि बोल... हरि बोल...।"

काजीः "हरि बोल... हरि बोल...।"

गौरांगः "हरि बोल... हरि बोल...।"

काजीः "हरि बोल... हरि बोल...।"

"हरि बोल.. हरि बोल... हरि बोल.. हरि बोल..।"

"हरि बोल.. हरि बोल... हरि बोल.. हरि बोल..।"

कीर्तन करते-करते गौरांग ने अपनी निगाहों से काजी पर कृपा बरसाई तो काजी भी झूमने लगा। उसे भी 'हरि बोल' का रंग लग गया। जैसे इंजन को हैण्डल देकर छोड़े देते हैं तब भी इंजन चलता रहता है ऐसे ही गौरांग की कृपादृष्टि से काजी भी झूमने लगा।

काजी के झूमने से वातावरण में और भी रंग आ गया। काजी तो झूम गया, काजी की पत्नी भी झूमी और चौकीदार भी झूम उठा। सब हरिकीर्तन में झूमते-झूमते अपने रक्त को पावन करने लगे, हृदय को हरिरस से सराबोर करने लगा। उनके जन्म-जन्म के पाप-ताप नष्ट होने लगे। जिस पर भगवान की दया होती है, जिसको साधुओं का संग मिलता है, सत्संग का सहारा मिलता है और भारतीय संस्कृति की महानता को समझने की अक्ल मिलती है फिर उसके उद्धार में क्या बाकी रह जाता है? काजी का तो उद्धार हो गया।

देखो, संत की उदारता एवं महानता। जिसने हिन्दुओं पर जुल्म करवाये, भक्त हरिदास को बेंत मरवाते-मरवाते यमुना जी में डलवा दिया, प्रभातफेरी पर प्रतिबंध लगवा दिया उसी काजी को गौरांग ने हरिरंग में रंग दिया। अपनी कृपादृष्टि से निहाल कर दिया। उसके क्रूर कर्मों की ओर ध्यान न देते हुए भक्ति का दान दे दिया। ऐसे गौरांग के श्रीचरणों में हमारे हजार-हजार प्रणाम हैं। हम उस मुसलमान युवक हरिदास को भी धन्यवाद देते हैं कि उसने बेंत खाते, पीड़ा सहते भी भक्ति न छोड़ी, गुरुदेव को न छोड़ा, न ही उनके दबाव में आकर पुनः मुसलमान बना। 'हरि बोल' के रंग में स्वयं रंगा और सिपाहियों को भी रंग दिया। धन्य है हरिदास और उसकी हरिभक्ति!

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

बनावटी श्रृंगार से बचो

जर्मनी के प्रसिद्ध दार्शनिक शोपेनहार कहते हैं कि जिन देशों में हथियार बनाये जाते हंत उन देशों के लोगों को युद्ध करने की उत्तेजना होती है और उन देशों में हथियार बनते ही रहते हैं, युद्ध भी होते रहते हैं। ऐसे ही जो लोग फैशन करते हैं उनके हृदय में काम, क्रोध, लोभ, मोह रूपी युद्ध होता ही रहता है। उनके जीवन में विलासिता आती है और पतन होता है वैसे ही फैशन और विलासिता से संयम, सदाचार और योग्यता का संहार होता है।

इसलिए युद्ध के साधन बढ़ने से जैसे युद्ध होता है वैसे ही विलासिता और फैशन के साधनों का उपयोग करने से अंतर्युद्ध होता है। अपनी आत्मिक शक्तियों का संहार होता है। अतः अपना भला चाहने वाले भाई-बहनों को पफ-पाउडर, लिपस्टिक-लाली, वस्त्र-अलंकार के दिखावे के पीछे नहीं पड़ना चाहिए। संयम, सादगी एवं पवित्रतापूर्ण जीवन जीना चाहिए।

अपने शास्त्रों में श्रृंगार की अनुमति दी गई है। सौभाग्यवती स्त्रियाँ, जब पति अपने ही नगर में हो, घर में हो तब श्रृंगार करें। पति यदि दूर देश गया हो तब सौभाग्यवति स्त्रियों को भी सादगीपूर्ण जीवन जीना चाहिए। श्रृंगार के उपयोग में आनेवाली वस्तुएँ भी वनस्पितयों एवं सात्त्विक रसों से बनी हुई होनी चाहिए जो प्रसन्नता और आरोग्यता प्रदान करें।

आजकल तो शरीर में उत्तेजना पैदा करें, बीमारियाँ पैदा करें ऐसे कैमिकल्स(रसायनों) और जहर जैसे साधनों से श्रृंगार-प्रसाधन बनाए जाते हैं जिससे शरीर के अन्दर जहरीले कण जाते हैं और त्वचा की बीमारियाँ होती हैं। आहार में भी जहरीले कणों के जाने से पाचन-तंत्र और मानसिक संतुलन बिगड़ता है, साथ ही बौद्धिक एवं वैचारिक संतुलन भी बिगड़ता है।

पशुओं की चर्बी, केमिकल्स और दूसरे थोड़े जहरीले द्रव्यों से बने पफ-पाउडर, लिपस्टिक-लाली आदि जिन प्रसाधनों का ब्यूटी-पार्लर में उपयोग किया जाता है वैसी गंदगी कभी-भी अपने शरीर को तो लगानी ही नहीं चाहिए। दूसरे लोगों ने लगायी हो तो देखकर प्रसन्न भी नहीं होना चाहिए। अपने संयम और सदाचार की सुन्दरता को प्रगट करना चाहिए। मीरा और शबरी किस ब्यूटी-पार्लर में गये थे? सती अनुसूया, गार्गी और मदालसा ने किस पफ-पाउडर, लाली-लिपस्टिक का उपयोग किया था? फिर भी उनका जीवन सुन्दर, तेजस्वी था। हम भी ईश्वर से प्रार्थना करें कि 'हे भगवान! हम अपना संयम और साधना का सौन्दर्य बढ़ाएँ, ऐसी तू दया करना। विकारी सौन्दर्य से अपने को बचाकर निर्विकारी नारायण की ओर जायें ऐसी तू दया करना। विलासिता में अपने समय को न लगाकर तेरे ही ध्यान-चिंतन में हमारा समय बीते ऐसी तू कृपा करना।'

कृत्रिम सौन्दर्य-प्रसाधन से त्वचा की स्निग्धता और कोमलता मर जाती है। पफ-पाउडर, क्रीम आदि से शरीर की कुदरती स्निग्धता खत्म हो जाती है। प्राकृतिक सौन्दर्य को नष्ट करके जो कृत्रिम सौन्दर्य के गुलाम बनते हैं उनसे स्नेहभरी सलाह है कि वे पफ-पाउडर आदि और तड़कीले-भड़कीले वस्त्र आदि की गुलामी को छोड़कर प्राकृतिक सौन्दर्य को बढ़ाने की कोशिश करें। मीरा और मदालसा की तरह अपने असली सौन्दर्य को प्रकट करने की कोशिश करें।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

साहसी बालक

एक लड़का काशी में हरिश्चन्द्र हाईस्कूल में पढ़ता था। उसका गाँव काशी से आठ मील दूर था। वह रोजाना वहाँ से पैदल चलकर आता, बीच में जो गंगा नदी बहती है उसे पार करके विद्यालय पहुँचता।

उस जमाने में गंगा पार करने के लिए नाव वाले को दो पैसे देने पड़ते थे। दो पैसे आने के और दो पैसे जाने के, कुल चार पैसे यानि पुराना एक आना। महीने में करीब दो रुपये हुए। जब सोने के एक तोले का भाव रुपया सौ से भी नीचे था तब के दो रुपये। आज के तो पाँच–पच्चीस रुपये हो जाएं।

उस लड़के ने अपने माँ–बाप पर अतिरिक्त बोझा न पड़े इसलिए एक भी पैसे की माँग नहीं की। उसने तैरना सीख लिया। गर्मी हो, बारिश हो या ठण्ड हो, गंगा पार करके हाईस्कूल में जाना उसका क्रम हो गया। इस प्रकार कितने ही महीने गुजर गये।

एक बार पौष मास की ठण्ड में वह लड़का सुबह की स्कूल भरने के लिए गंगा में कूदा। तैरते–तैरते मझधार में आया। एक नाव में कुछ यात्री नदी पार कर रहे थे। उन्होंने देखा कि छोटा–सा लड़का अभी डूब मरेगा। वे उसके पास नाव ले गये और हाथ पकड़ कर उसे नाव में खींच लिया। लड़के के मुख पर घबराहट या चिन्ता की कोई रेखा नहीं थी। सब लोग दंग रह गये। इतना छोटा है और इतना साहसी है। वे बोलेः

"तू अभी डूब मरता तो? ऐसा साहस नहीं करना चाहिए।"

तब लड़का बोलाः "साहस तो होना ही चाहिए। जीवन में विघ्न–बाधाएँ आयेंगी, उन्हें कुचलने के लिए साहस तो चाहिए ही। अगर अभी से साहस नहीं जुटाया तो जीवन में बड़े–बड़े कार्य कैसे कर पायेंगे।

लोगों ने पूछाः "इस समय तैरने क्यों गिरा? दोपहर को नहाने आता?"

लड़का बोलता हैः "मैं नहाने के लिए नदी में नहीं गिरा हूँ। मैं तो स्कूल जा रहा हूँ।"

"नाव में बैठकर जाता?"

"रोज के चार पैसे आने–जाने के लगते हैं। मेरे गरीब माँ–बाप पर मुझे बोझा नहीं बनना है। मुझे तो अपने पैरों पर खड़े होना है। मेरा खर्च बढ़े तो मेरे माँ–बाप की चिन्ता बढ़े। उन्हे घर चलाना मुश्किल हो जाये।"

लोग उसे आदर से देखते ही रह गये। वही साहसी लड़का आगे चलकर भारत का प्रधान मंत्री बना।

वह लड़का कौन था, पता है? वे थे लाल बहादुर शास्त्री। शास्त्री जी उस पद भी सच्चाई, साहस, सरलता, ईमानदारी, सादगी, देशप्रेम आदि सदगुण और सदाचार के मूर्तिमन्त स्वरूप थे। ऐसे महापुरुष भले फिर थोड़ा–सा समय ही राज्य करें पर एक अनोखा प्रभाव छोड़ जाते हैं जनमानस पर।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

गुरु-आज्ञापालन का चमत्कार

श्रीमद् आद्यशंकराचार्य जी जब काशी में निवास करते थे तब गंगा–तट पर नित्य प्रातः–काल टहलते थे। एक सुबह किसी प्रतिभासंपन्न युवक ने दूसरे किनारे से देखा कि कोई सन्यासी उस पार टहल रहे हैं। उस युवक ने दूसरे किनारे से ही उन्हें प्रणाम किया। उस युवक को देखकर आद्यशंकराचार्य जी ने संकेत किया कि

'इधर आ जाओ।'

उस आभासम्पन्न युवक ने देखा कि मैंने तो साधू को प्रणाम कर दिया है। प्रणाम कर दिया तो मैं उनका शिष्य हो गया और उन्होंने मुझे आदेश दिया कि 'इधर आ जाओ।' अब गुरु की आज्ञा का उल्लंघन करना भी तो उचित नहीं है। किन्तु यहाँ कोई नाव नहीं है और मैं तैरना भी नहीं जानता हूँ। अब क्या करूँ? उसके मन में विचार आया कि वैसे भी तो हजारों बार हम मर चुके हैं। एक बार यदि गुरु के दर्शन के लिए जाते-जाते मर जायें तो घाटा क्या होगा।?

'गंगे मात की जय' कह कर उस युवक ने तो गंगाजी में पैर रख दिया। उसकी इच्छा कहो, श्रीमद् आद्यशंकराचार्य जी का प्रभाव कहो या नियति की लीला कहो, जहाँ उस युवक ने कदम रखा वहाँ एक कमल पैदा हो गया उसके पैर को थामने के लिए। जब दूसरा पैर रखा तो वहाँ भी कमल पैदा हो गया। इस प्रकार जहाँ-जहाँ वह कदम रखता गया वहाँ कमल (पद्म) उत्पन्न होता गया और वह युवक गंगा के दूसरे तट पर, जहाँ आद्यशंकराचार्य जी खड़े थे, पहुँच गया।

जहाँ-जहाँ वह कदम रखता था, वहाँ-वहाँ पद्म (कमल) के प्रकट होने के कारण उसका नाम पड़ा – 'पद्मपादाचार्य'। शंकराचार्य जी के मुख्य चार पट्टशिष्यों में आगे जाकर यही पद्मपादाचार्य एक पट्टशिष्य बने।

कहने का तात्पर्य यह है कि सच्चिदानंद परमात्मा की शक्ति का, सामर्थ्य का बयान करना संभव नहीं है। जिसकी जितनी दृढ़ता है, जिसकी जितनी सच्चाई है, जिसकी जितनी तत्परता है उतनी ही प्रकृति भी उसकी मदद करने को आतुर रहती है। पद्मपादाचार्य की गुरु-आज्ञापालन में दृढ़ता और तत्परता को देखकर गंगा जी में कमल प्रगट हो गयी। शिष्य यदि दृढ़ता, तत्परता और ईमानदारी से गुरु-आज्ञापालन में लग जाये तो प्रकृति भी उसके अनुकूल हो जाती है।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

अनोखी गुरुदक्षिणा

एकलव्य गुरु द्रोणाचार्य के पास आकर बोलाः "मुझे धनुर्विद्या सिखाने की कृपा करें, गुरुदेव!"

गुरु द्रोणाचार्य के समक्ष धर्मसंकट उत्पन्न हुआ क्योंकि उन्होंने भीष्म पितामह को वचन दे दिया था कि केवल राजकुमारों को ही मैं शिक्षा दूँगा। एकलव्य राजकुमार नहीं है अतः उसे धनुर्विद्या कैसे सिखाऊँ? अतः द्रोणाचार्य ने एकलव्य से कहाः

"मैं तुझे धनुर्विद्या नहीं सिखा सकूँगा।"

एकलव्य घर से निश्चय करके निकला था कि मैं केवल गुरु द्रोणाचार्य को ही गुरु बनाऊँगा। जिनके लिए मन में भी गुरु बनाने का भाव आ गया उनके किसी भी व्यवहार के लिए शिकायत या छिद्रान्वेषण की वृत्ति नहीं होनी चाहिए।

एकलव्य एकांत अरण्य में गया और उसने गुरु द्रोणाचार्य की मिट्टी की मूर्ति बनायी। मूर्ति की ओर एकटक देखकर ध्यान करके उसी से प्रेरणा लेकर वह धनुर्विद्या सीखने लगा। एकटक देखने से एकाग्रता आती है। एकाग्रता, गुरुभक्ति, अपनी सच्चाई और तत्परता के कारण उसे प्रेरणा मिलने लगी। ज्ञानदाता तो परमात्मा है। धनुर्विद्या में वह बहुत आगे बढ़ गया।

एक बार द्रोणाचार्य, पांडव एवं कौरव धनुर्विद्या का प्रयोग करने अरण्य में आये। उनके साथ एक कुत्ता भी था, जो थोड़ा आगे निकल गया। कुत्ता वहीं पहुँचा जहाँ एकलव्य अपनी धनुर्विद्या का प्रयोग कर रहा था।

एकलव्य के खुले बाल, फटे कपड़े एवं विचित्र वेष को देखकर कुत्ता भौंकने लगा।

एकलव्य ने कुत्ते को लगे नहीं, चोट न पहुँचे और उसका भौंकना बंद हो जाये इस ढंग से सात बाण उसके मुँह में थमा दिये। कुत्ता वापिस वहाँ गया, जहाँ द्रोणाचार्य के साथ पांडव और कौरव थे।

उसे देखकर अर्जुन को हुआ कि कुत्ते को चोट न लगे, इस ढंग से बाण मुँह में घुसाकर रख देना, यह विद्या तो मैं भी नहीं जानता। यह कैसे संभव हुआ? वह गुरु द्रोणाचार्य से बोलाः

"गुरुदेव! आपने तो कहा था कि मेरी बराबरी का दूसरा कोई धनुर्धारी नहीं होगा। किन्तु ऐसी विद्या तो मुझे भी नहीं आती।"

द्रोणाचार्य को हुआ कि देखें, इस अरण्य में कौन–सा ऐसा कुशल धनुर्धर है? आगे जाकर देखा तो वह था हिरण्यधनु का पुत्र गुरुभक्त एकलव्य।

द्रोणाचार्य ने पूछाः "बेटा! यह विद्या तू कहाँ से सीखा?"

एकलव्य बोलाः "गुरुदेव! आपकी ही कृपा से सीखा हूँ।"

द्रोणाचार्य तो वचन दे चुके थे कि अर्जुन की बराबरी का धनुर्धर दूसरा कोई न होगा। किन्तु यह तो आगे निकल गया। गुरु के लिए धर्मसंकट खड़ा हो गया। एकलव्य की अटूट श्रद्धा देखकर द्रोणाचार्य ने कहाः "मेरी मूर्ति को सामने रखकर तू धनुर्विद्या तो सीखा, किन्तु गुरुदक्षिणा?"

एकलव्यः "जो आप माँगें?"

द्रोणाचार्यः "तेरे दायें हाथ का अंगूठा।"

एकलव्य ने एक पल भी विचार किये बिना अपने दायें हाथ का अंगूठा काटकर गुरुदेव के चरणों में अर्पण कर दिया।

द्रोणाचार्यः "बेटा! भले ही अर्जुन धनुर्विद्या में सबसे आगे रहे क्योंकि मैं उसे वचन दे चुका हूँ। किन्तु जब तक सूर्य, चन्द्र, नक्षत्रों का अस्तित्व रहेगा तब तक लोग तेरी गुरुनिष्ठा का, तेरी गुरुभक्ति का स्मरण करेंगे, तेरा यशोगान होता रहेगा।"

उसकी गुरुभक्ति और एकाग्रता ने उसे धनुर्विद्या में तो सफलता दिलायी ही, लेकिन संतों के हृदय में भी उसके लिए आदर प्रगट करवा दिया। धन्य है एकलव्य जो गुरुमूर्ति से प्रेरणा पाकर धनुर्विद्या में सफल हुआ और जिसने अदभुत गुरुदक्षिणा देकर साहस, त्याग और समर्पण का परिचय दिया।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

सत्संग की महिमा

तुलसीदास जी महाराज कहते हैं ?

एक घड़ी आधी घड़ी आधी में पुनि आध।
तुलसी संगत साध की हरे कोटि अपराध॥

एक बार शुकदेव जी के पिता भगवान वेदव्यासजी महाराज कहीं जा रहे थे। रास्ते में उन्होंने देखा कि एक कीड़ा बड़ी तेजी से सड़क पार कर रहा था।

वेदव्यासजी ने अपनी योगशक्ति देते हुए उससे पूछाः

"तू इतनी जल्दी सड़क क्यों पार कर रहा है? क्या तुझे किसी काम से जाना है? तू तो नाली का कीड़ा है। इस नाली को छोड़कर दूसरी नाली में ही तो जाना है, फिर इतनी तेजी से क्यों भाग रहा है?"

कीड़ा बोलाः "बाबा जी बैलगाड़ी आ रही है। बैलों के गले में बँधे घुँघरु तथा बैलगाड़ी के पहियों की आवाज मैं सुन रहा हूँ। यदि मैं धीरे–धीर सड़क पार करूँगा तो वह बैलगाड़ी आकर मुझे कुचल डालेगी।"

वेदव्यासजीः "कुचलने दे। कीड़े की योनि में जीकर भी क्या करना?"

कीड़ाः "महर्षि! प्राणी जिस शरीर में होता है उसको उसमें ही ममता होती है। अनेक प्राणी नाना प्रकार के कष्टों को सहते हुए भी मरना नहीं चाहते।"

वेदव्यास जीः "बैलगाड़ी आ जाये और तू मर जाये तो घबराना मत। मैं तुझे योगशक्ति से महान बनाऊँगा। जब तक ब्राह्मण शरीर में न पहुँचा दूँ, अन्य सभी योनियों से शीघ्र छुटकारा दिलाता रहूँगा।"

उस कीड़े ने बात मान ली और बीच रास्ते पर रुक गया और मर गया। फिर वेदव्यासजी की कृपा से वह क्रमशः कौआ, सियार आदि योनियों में जब–जब भी उत्पन्न हुआ, व्यासजी ने जाकर उसे पूर्वजन्म का स्मरण दिला दिया। इस तरह वह क्रमशः मृग, पक्षी, शूद्र, वैश्य जातियों में जन्म लेता हुआ क्षत्रिय जाति में उत्पन्न हुआ। उसे वहाँ भी वेदव्यासजी दर्शन दिये। थोड़े दिनों में रणभूमि में शरीर त्यागकर उसने ब्राह्मण के घर जन्म लिया।

भगवान वेदव्यास जी ने उसे पाँच वर्ष की उम्र में सारस्वत्य मंत्र दे दिया जिसका जप करते–करते वह ध्यान करने लगा। उसकी बुद्धि बड़ी विलक्षण होने पर वेद, शास्त्र, धर्म का रहस्य समझ में आ गया।

सात वर्ष की आयु में वेदव्यास जी ने उसे कहाः

"कार्त्तिक क्षेत्र में कई वर्षों से एक ब्राह्मण नन्दभद्र तपस्या कर रहा है। तुम जाकर उसकी शंका का समाधान करो।"

मात्र सात वर्ष का ब्राह्मण कुमार कार्तिक क्षेत्र में तप कर रहे उस ब्राह्मण के पास पहुँच कर बोलाः

"हे ब्राह्मणदेव! आप तप क्यों कर रहे हैं?"

ब्राह्मणः "हे ऋषिकुमार! मैं यह जानने के लिए तप कर रहा हूँ कि जो अच्छे लोग है, सज्जन लोग है, वे सहन करते हैं, दुःखी रहते हैं और पापी आदमी सुखी रहते हैं। ऐसा क्यों है?"

बालकः "पापी आदमी यदि सुखी है, तो पाप के कारण नहीं, वरन् पिछले जन्म का कोई पुण्य है, उसके कारण सुखी है। वह अपने पुण्य खत्म कर रहा है। पापी मनुष्य भीतर से तो दुःखी ही होता है, भले ही बाहर से सुखी दिखाई दे।

धार्मिक आदमी को ठीक समझ नहीं होती, उचित दिशा व मंत्र नहीं मिलता इसलिए वह दुःखी होता है। वह धर्म के कारण दुःखी नहीं होता, अपितु समझ की कमी के कारण दुःखी होता है। समझदार को यदि कोई गुरु मिल जायें तो वह नर में से नारायण बन जाये, इसमें क्या आश्चर्य है?"

ब्राह्मणः "मैं इतना बूढ़ा हो गया, इतने वर्षों से कार्तिक क्षेत्र में तप कर रहा हूँ। मेरे तप का फल यही है कि तुम्हारे जैसे सात वर्ष के योगी के मुझे दर्शन हो रहे हैं। मैं तुम्हें प्रणाम करता हूँ।"

बालकः "नहीं... नहीं, महाराज! आप तो भूदेव हैं। मैं तो बालक हूँ। मैं आपको प्रणाम करता हूँ।"

उसकी नम्रता देखकर ब्राह्मण और खुश हुआ। तप छोड़कर वह परमात्मचिन्तन में लग गया। अब उसे कुछ जानने की इच्छा नहीं रही। जिससे सब कुछ जाना जाता है उसी परमात्मा में विश्रांति पाने लग गया।

इस प्रकार नन्दभद्र ब्राह्मण को उत्तर दे, निःशंक होकर सात दिनों तक निराहार रहकर वह बालक सूर्यमन्त्र का जप करता रहा और वहीं बहूदक तीर्थ में उसने शरीर त्याग दिया। वही बालक दूसरे जन्म में कुषारु पिता एवं मित्रा माता के यहाँ प्रगट हुआ। उसका नाम मैत्रेय पड़ा। इन्होंने व्यासजी के पिता पराशरजी से 'विष्णु–पुराण' तथा 'बृहत् पाराशर होरा शास्त्र' का अध्ययन किया था। 'पक्षपात रहित अनुभवप्रकाश' नामक ग्रन्थ में मैत्रेय तथा पराशर ऋषि का संवाद आता है।

कहाँ तो सड़क से गुजरकर नाली में गिरने जा रहा कीड़ा और कहाँ संत के सान्निध्य से वह मैत्रेय

ऋषि बन गया। सत्संग की बलिहारी है! इसीलिए तुलसीदास जी कहते हैं ?

तात स्वर्ग अपवर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिली जो सुख लव सतसंग।।

यहाँ एक शंका हो सकती है कि वह कीड़ा ही मैत्रेय ऋषि क्यों नहीं बन गया?

अरे भाई! यदि आप पहली कक्षा के विद्यार्थी हो और आपको एम. ए. में बिठाया जाये तो क्या आप पास हो सकते हो....? नहीं...। दूसरी, तीसरी, चौथी... दसवीं... बारहवीं... बी.ए. आदि पास करके ही आप एम.ए. में प्रवेश कर सकते हो।

किसी चौकीदार पर कोई प्रधानमन्त्री अत्यधिक प्रसन्न हो जाए तब भी वह उसे सीधा कलेक्टर (जिलाधीश) नहीं बना सकता, ऐसे ही नाली में रहने वाला कीड़ा सीधा मनुष्य तो नहीं हो सकता बल्कि विभिन्न योनियों को पार करके ही मनुष्य बन सकता है। हाँ इतना अवश्य है कि संतकृपा से उसका मार्ग छोटा हो जाता है।

संतसमागम की, साधु पुरुषों से संग की महिमा का कहाँ तक वर्णन करें, कैसे बयान करें? एक सामान्य कीड़ा उनके सत्संग को पाकर महान् ऋषि बन सकता है तो फिर यदि मानव को किसी सदगुरु का सान्निध्य मिल जाये.... उनके वचनानुसार चल पड़े तो मुक्ति का अनुभव करके जीवन्मुक्त भी बन सकता है।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

'पीड़ पराई जाने रे....'

ज्ञानी किसी से प्यार करने के लिए बँधे हुए नहीं हैं और किसी को डाँटने में भी राजी नहीं हैं। हमारी जैसी योग्यता होती है, ऐसा उनका व्यवहार हमारे प्रति होता है।

लीलाशाह बापू के श्रीचरणों में बहुत लोग गये थे। एक लड़का भी गया था। वह मणिनगर में रहता था। शिवजी को जल चढ़ाने के पश्चात ही वह जल पीता। वह लड़का खूब निष्ठा से ध्यान-भजन करता और सेवा पूजा करता।

एक दिन कोई व्यक्ति रास्ते में बेहोश पड़ा हुआ था। शिवजी को जल चढ़ाने जाते समय उस बालक ने उसे देखा और अपनी पूजा-वूजा छोड़कर उस गरीब की सेवा में लग गया। बिहार का कोई युवक था। नौकरी की खोज में आया था। कालुपुर(अहमदाबाद) स्टेशन के प्लेटफार्म पर एक दो दिन रहा। कुलियों ने मारपीट कर भगा दिया। चलते-चलते मणिनगर में पुनीत आश्रम की ओर रोटी की आशा में जा रहा था। रोटी तो वहाँ नहीं मिलती थी इसलिए भूख के कारण चलते-चलते रास्ते में गिर गया और बेहोश हो गया।

उस लड़के का घर पुनीत आश्रम के पास ही था। सुबह के दस साढ़े दस बजे थे। वह लड़का घर से ध्यान-भजन से निपटकर मंदिर में शिवजी को जल चढ़ाने के लिए जल का लोटा और पूजा की सामग्री लेकर जा रहा था। उसने देखा कि रास्ते में कोई युवक पड़ा है। रास्ते में चलते-चलते लोग बोलते थेः 'शराब पी होगी, यह होगा, वह होगा... हमें क्या?

लड़के को दया आई। पुण्य कियें हुए हों तो प्रेरणा भी अच्छी मिलती है। शुभ कर्मों से शुभ प्रेरणा मिलती है। अपने पास की पूजा सामग्री एक ओर रखकर उसने उस व्यक्ति को हिलाया। बहुत मुश्किल से उसकी आँखें खुलीं। कोई उसे जूते सुंघाता, कोई कुछ करता, कोई कुछ बोलता था।

आँखें खोलते ही वह व्यक्ति धीरे से बोलाः

"पानी.... पानी...."

लड़के ने महादेव जी के लिये लाया हुआ जल का लोटा उसे पिला दिया। फिर दौडकर घर जाकर अपने हिस्से का दूध लाकर उसे दिया।

युवक के जी में जी आया। उसने अपनी व्यथा बताते हुए कहाः

"बाबप्त जी! मैं बिहार से आया हूँ। मेरे बाप गुजर गये। काका दिन–रात टोकते रहते कि कमाओ नहीं तो खाओगे क्या? नौकरी धंधा मिलता नहीं है। भटकते–भटकते अहमदाबाद के स्टेशन पर कुली का काम करने का प्रयत्न किया। हमारी रोजी–रोटी छिन जायेगी ऐसा समझकर कुलियों ने खूब मारा। पैदल चलते–चलते मणिनगर स्टेशन की ओर आते–आते यहाँ तीन दिन की भूख और मार के कारण चक्कर आये और गिर गया।"

लड़के ने उसे खिलाया। अपना इकट्ठा किया हुआ जेबखर्च का पैसा दिया। उस युवक को जहाँ जाना था वहाँ भेजने की व्यवस्था की। इस लड़के के हृदय में आनंद की वृद्धि हुई। अंतर में आवाज आईः

"बेटा! अब मैं तुझे बहुत जल्दी मिलूँगा।"

लड़के ने प्रश्न कियाः "अन्दर कौन बोलता है?"

उत्तर आयाः "जिस शिव की तू पूजा करता है वह तेरा आत्मशिव। अब मैं तेरे हृदय में प्रकट होऊँगा। सेवा के अधिकारी की सेवा मुझ शिव की ही सेवा है।"

उस दिन उस अंतर्यामी ने अनोखी प्रेरणा और प्रोत्साहन दिया। वह लड़का तो निकल पड़ा घर छोड़कर। ईश्वर–साक्षात्कार करने के लिए केदारनाथ, वृन्दावन होते हुए नैनिताल के अरण्य में पहुँचा।

केदारनाथ के दर्शन पाये,
लक्षाधिपति आशिष पाये।

इस आशीर्वाद को वापस कर ईश्वरप्राप्ति के लिए फिर पूजा की। उसके पास जो कुछ रुपये पैसे थे, उन्हें वृन्दावन में साधु–संतों एवं गरीबों में भण्डारा करके खर्च कर दिया था। थोड़े से पैसे लेकर नैनिताल के अरण्यों में पहुँचा। लोकलाड़ल, लाखों हृदयों को हरिरस पिलाते पूज्यपाद सदगुरु श्री लीलाशाह बापू की राह देखते हुए चालीस दिन बीत गये। गुरुवर श्री लीलाशाह को अब पूर्ण समर्पित शिष्य मिला... पूर्ण खजाना प्राप्त करने वाला पवित्रात्मा मिला। पूर्ण गुरु को पूर्ण शिष्य मिला।

जिस लड़के के विषय में यह कथा पढ़ रहे हैं, वह लड़का कौन होगा, जानते हो?

पूर्ण गुरु कृपा मिली, पूर्ण गुरु का ज्ञान।
आसुमल से हो गये, साईं आसाराम॥

अब तो समझ ही गये होंगे।

(उस लड़के के वेश में छुपे हुए थे पूर्व जन्म के योगी और वर्तमान में विश्वविख्यात हमारे पूज्यपाद सदगुरुदेव श्री आसाराम जी महाराज।)

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

विकास के बैरियों से सावधान!

कपिलवस्तु के राजा शुद्धोदन का युवराज था सिद्धार्थ! यौवन में कदम रखते ही विवेक और वैराग्य जाग उठा। युवान पत्नी यशोधरा और नवजात शिशु राहुल की मोह–ममता की रेशमी जंजीर काटकर महाभीनिष्क्रमण (गृहत्याग) किया। एकान्त अरण्य में जाकर गहन ध्यान साधना करके अपने साध्य तत्त्व को

प्राप्त कर लिया।

एकान्त में तपश्चर्या और ध्यान साधना से खिले हुए इस आध्यात्मिक कुसुम की मधुर सौरभ लोगो में फैलने लगी। अब सिद्धार्थ भगवान बुद्ध के नाम से जन–समूह में प्रसिद्ध हुए। हजारों हजारों लोग उनके उपदिष्ट मार्ग पर चलने लगे और अपनी अपनी योग्यता के मुताबिक आध्यात्मिक यात्रा में आगे बढ़ते हुए आत्मिक शांति प्राप्त करने लगे। असंख्य लोग बौद्ध भिक्षुक बनकर भगवान बुद्ध के सान्निध्य में रहने लगे। उनके पीछे चलने वाले अनुयायीओं का एक संघ स्थापित हो गया। चहुँ ओर नाद गूँजने लगे किः

बुद्धं शरणं गच्छामि।
धम्मं शरणं गच्छामि।
संघं शरणं गच्छामि।

श्रावस्ती नगरी में भगवान बुद्ध का बहुत यश फैला। लोगों में उनकी जय–जयकार होने लगी। लोगों की भीड़–भाड़ से विरक्त होकर बुद्ध नगर से बाहर जेतवन में आम के बगीचे में रहने लगे। नगर के पिपासु जन बड़ी तादाद में वहाँ हररोज निश्चित समय पर पहुँच जाते और उपदेश–प्रवचन सुनते। बड़े–बड़े राजा महाराजा भगवान बुद्ध के सान्निध्य में आने जाने लगे।

समाज में तो हर प्रकार के लोग होते हैं। अनादि काल से दैवी सम्पदा के लोग एवं आसुरी सम्पदा के लोग हुआ करते हैं। बुद्ध का फैलता हुआ यश देखकर उनका तेजोद्वेष करने वाले लोग जलने लगे। संतों के साथ हमेशा से होता आ रहा है ऐसे उन दुष्ट तत्त्वों ने बुद्ध को बदनाम करने के लिए कुप्रचार किया। विभिन्न प्रकार की युक्ति–प्रयुक्तियाँ लड़ाकर बुद्ध के यश को हानि पहुँचे ऐसी बातें समाज में वे लोग फैलाने लगे। उन दुष्टों ने अपने षड्यंत्र में एक वेश्या को समझा–बुझाकर शामिल कर लिया।

वेश्या बन–ठनकर जेतवन में भगवान बुद्ध के निवास–स्थानवाले बगीचे में जाने लगी। धनराशि के साथ दुष्टों का हर प्रकार से सहारा एवं प्रोत्साहन उसे मिल रहा था। रात्रि को वहीं रहकर सुबह नगर में वापिस लौट आती। अपनी सखियों में भी उसने बात फैलाई।

लोग उससे पूछने लगेः "अरी! आजकल तू दिखती नहीं है? कहाँ जा रही है रोज रात को?"

"मैं तो रोज रात को जेतवन जाती हूँ। वे बुद्ध दिन में लोगों को उपदेश देते हैं और रात्रि के समय मेरे साथ रंगरेलियाँ मनाते हैं। सारी रात वहाँ बिताकर सुबह लौटती हूँ।"

वेश्या ने पूरा स्त्रीचरित्र आजमाकर षड्यंत्र करने वालों का साथ दिया. लोगों में पहले तो हलकी कानाफूसी हुई लेकिन ज्यों–ज्यों बात फैलती गई त्यों–त्यों लोगों में जोरदार विरोध होने लगा। लोग बुद्ध के नाम पर फिटकार बरसाने लगे। बुद्ध के भिक्षुक बस्ती में भिक्षा लेने जाते तो लोग उन्हें गालियाँ देने लगे। बुद्ध के संघ के लोग सेवा–प्रवृत्ति में संलग्न थे। उन लोगों के सामने भी उँगली उठाकर लोग बकवास करने लगे।

बुद्ध के शिष्य जरा असावधान रहे थे। कुप्रचार के समय साथ ही साथ सुप्रचार होता तो कुप्रचार का इतना प्रभाव नहीं होता। शिष्य अगर निष्क्रिय रहकर सोचते रह जायें कि 'जो करेगा सो भरेगा... भगवान उनका नाश करेंगे..' तो कुप्रचार करने वालों को खुल्ला मैदान मिल जाता है।

संत के सान्निध्य में आने वाले लोग श्रद्धालू, सज्जन, सीधे सादे होते हैं, जबकि दुष्ट प्रवृत्ति करने वाले लोग कुटिलतापूर्वक कुप्रचार करने में कुशल होते हैं। फिर भी जिन संतों के पीछे सजग समाज होता है उन संतों के पीछे उठने वाले कुप्रचार के तूफान समय पाकर शांत हो जाते हैं और उनकी सत्प्रवृत्तियाँ प्रकाशमान हो उठती हैं।

कुप्रचार ने इतना जोर पकड़ा कि बुद्ध के निकटवर्ती लोगों ने 'त्राहिमाम्' पुकार लिया। वे समझ गये कि यह व्यवस्थित आयोजनपूर्वक षड्यंत्र किया गया है। बुद्ध स्वयं तो पारमार्थिक सत्य में जागे हुए थे। वे बोलतेः "सब ठीक है, चलने दो। व्यवहारिक सत्य में वाहवाही देख ली। अब निन्दा भी देख लें। क्या फर्क

पड़ता है?"

शिष्य कहने लगेः "भन्ते! अब सहा नहीं जाता। संघ के निकटवर्ती भक्त भी अफवाहों के शिकार हो रहे हैं। समाज के लोग अफवाहों की बातों को सत्य मानने लग गये हैं।"

बुद्धः "धैर्य रखो। हम पारमार्थिक सत्य में विश्रांति पाते हैं। यह विरोध की आँधी चली है तो शांत भी हो जाएगी। समय पाकर सत्य ही बाहर आयेगा। आखिर में लोग हमें जानेंगे और मानेंगे।"

कुछ लोगों ने अगवानी का झण्डा उठाया और राज्यसत्ता के समक्ष जोर-शोर से माँग की कि बुद्ध की जाँच करवाई जाये। लोग बातें कर रहे हैं और वेश्या भी कहती है कि बुद्ध रात्रि को मेरे साथ होते हैं और दिन में सत्संग करते हैं।

बुद्ध के बारे में जाँच करने के लिए राजा ने अपने आदमियों को फरमान दिया। अब षड्यंत्र करनेवालों ने सोचा कि इस जाँच करने वाले पंच में अगर सच्चा आदमी आ जाएगा तो अफवाहों का सीना चीरकर सत्य बाहर आ जाएगा। अतः उन्होंने अपने षड्यंत्र को आखिरी पराकाष्ठा पर पहुँचाया। अब ऐसे ठोस सबूत खड़ा करना चाहिए कि बुद्ध की प्रतिभा का अस्त हो जाये।

उन्होंने वेश्या को दारु पिलाकर जेतवन भेज दिया। पीछे से गुण्डों की टोली वहाँ गई। वेश्या पर बलात्कार आदि सब दुष्ट कृत्य करके उसका गला घोंट दिया और लाश को बुद्ध के बगीचे में गाड़कर पलायन हो गये।

लोगों ने राज्यसत्ता के द्वार खटखटाये थे लेकिन सत्तावाले भी कुछ लोग दुष्टों के साथ जुड़े हुए थे। ऐसा थोड़े ही है कि सत्ता में बैठे हुए सब लोग दूध में धोये हुए व्यक्ति होते हैं।

राजा के अधिकारियों के द्वारा जाँच करने पर वेश्या की लाश हाथ लगी। अब दुष्टों ने जोर-शोर से चिल्लाना शुरु कर दिया।

"देखो, हम पहले ही कह रहे थे। वेश्या भी बोल रही थी लेकिन तुम भगतड़े लोग मानते ही नहीं थे। अब देख लिया न? बुद्ध ने सही बात खुल जाने के भय से वेश्या को मरवाकर बगीचे में गड़वा दिया। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी। लेकिन सत्य कहाँ तक छिप सकता है? मुद्दामाल हाथ लग गया। इस ठोस सबूत से बुद्ध की असलियत सिद्ध हो गई। सत्य बाहर आ गया।"

लेकिन उन मूर्खों का पता नहीं कि तुम्हारा बनाया हुआ कल्पित सत्य बाहर आया, वास्तविक सत्य तो आज ढाई हजार वर्ष के बाद भी वैसा ही चमक रहा है। आज बुद्ध को लाखों लोग जानते हैं, आदरपूर्वक मानते हैं। उनका तेजोद्वेष करने वाले दुष्ट लोग कौन-से नरकों में जलते होंगे क्या पता!

ढाई हजार वर्ष पहले बुद्ध के जमाने में भी संतों के साथ ऐसा घोर अन्याय हुआ करता था। ऋषि दयानन्द को भी ऐसे ही तत्त्वों ने तेजोद्वेष के कारण बाईस बार विष देकर मार डालने का प्रयास किया। स्वामी विवेकानन्द और स्वामी रामतीर्थ के पीछे भी दुष्ट लोगों ने वेश्या को तैयार करके कीचड़ उछाला था।

एक ओर, लाखों-लाखों लोग संतों की अनुभवयुक्त वाणी से अपना व्यावहारिक ? आध्यात्मिक जीवन उन्नत करके सुख-शांति पाते हैं, दूसरी ओर, कुछ दुष्ट प्रकृति के स्वार्थी लोग अपना उल्लू सीधा करने के लिए ऐसे महापुरुषों के विरुद्ध में षड्यंत्र रचकर उनको बदनाम करते हैं। यह तो पहले से चला आ रहा है। संत कबीर हों या नानक, एकनाथ महाराज हों या संत तुकाराम, नरसिंह मेहता हों या मीराबाई, प्रायः सभी संतों को अपने जीवन के दौरान समाज के कुटिल तत्त्वों से पाला पड़ता ही रहा है। जीसस क्राइस्ट को इन्हीं तत्त्वों ने क्रॉस पर चढ़ाया था। उन्हीं लोगों ने सुकरात को जहर पिलाकर मृत्युदण्ड दिया था। मन्सूर को इसी जमात ने शूली पर चढ़ाया था। ईसाई धर्म में मार्टीन ल्यूथर पर जुल्म किया गया था। अणु-अणु में ईश्वर और नारीमात्र में जगज्जननी भगवती का दर्शन करने वाले रामकृष्ण परमहंस को भी लोगों ने नहीं छोड़ा था। परमहंस योगानन्द, रवीन्द्रनाथ टैगोर, मार्टीन ल्यूथर, दक्षिण भारत के संत तिरुवल्लुवर, जापानी झेन संत बाबो... इतिहास

में कितने–कितने उदाहरण मौजूद हैं।

हासिद धर्मगुरु बाल्शामटोव अति पवित्र आत्मा थे। निन्दकों ने उनके इर्दगिर्द भी मायाजाल बिछा दी थी। सिंध के साईं टेउंराम के पास असंख्य लोग आत्मकल्याण हेतु जाने लगे तब विकृत दिमागवालों ने उन संत को भी त्रास देना शुरु कर दिया। उनके आश्रम के चहुँ ओर गंदगी डाल देते और कुएँ में मिट्टी का तेल उड़ेलकर पानी बेकार कर देते। मुगल बादशाह बाबर को बहका कर उन्हीं लोगों ने गुरु नानक को कैद करवाया था।

भगवान श्रीराम एवं श्रीकृष्ण को भी दुष्टजनों ने छोड़ा नहीं था। भगवान श्रीराम के गुरु वशिष्ठजी महाराज कहते हैः

"हे राम जी! मैं जब बाजार से गुजरता हूँ तब अज्ञानी मूर्ख लोग मेरे लिए क्या बकते हैं, मैं सब जानता हूँ। लेकिन मेरा दयालू स्वभाव है। मैं इन सबका कल्याण चाहता हूँ।"

तुम्हारे साथ यह संसार कुछ अन्याय करता है, तुमको बदनाम करता है, निन्दा करता है तो यह संसार की पुरानी रीत है। मनुष्य की हीनवृत्ति, कुप्रचार, निन्दाखोरी यह आजकल की ही बात नहीं है। अनादिकाल से ऐसा होता आया है। तुम अपने आत्मज्ञान के संस्कार जगाकर, आत्मबल का विकास करते जाओ, मुस्कराते जाओ, आँधी तुफानों को लाँघकर आनन्दपूर्वक जीते जाओ।

उस जमाने में भगवान बुद्ध के पास आकर एक भिक्षुक ने प्रार्थना कीः

"भन्ते! मुझे आज्ञा दें, मैं सभाएँ भरूँगा। आपके विचारों का प्रचार करूँगा।"

"मेरे विचारों का प्रचार?"

"हाँ, भगवन्! मैं बौद्ध धर्म फैलाऊँगा।"

"लोग तेरी निन्दा करेंगे, गालियाँ देंगे।"

"कोई हर्ज नहीं। मैं भगवन को धन्यवाद दूँगा कि ये लोग कितने अच्छे हैं! ये केवल शब्दप्रहार करते हैं, मुझे पीटते तो नहीं।"

"लोग तुझे पीटेंगे भी, तो क्या करोगे?"

"प्रभो! मैं शुक्र गुजारूँगा कि ये लोग हाथों से पीटते हैं, पत्थर तो नहीं मारते।"

"लोग पत्थर भी मारेंगे और सिर भी फोड़ देंगे तो क्या करेगा?"

"फिर भी मैं आश्वस्त रहूँगा और भगवान का दिव्य कार्य करता रहूँगा क्योंकि वे लोग मेरा सिर फोड़ेंगे लेकिन प्राण तो नहीं लेंगे।"

"लोग जूनून में आकर तुझे मार देंगे तो क्या करेगा?"

"भन्ते! आपके दिव्य विचारों का प्रचार करते–करते मैं मर भी गया तो समझूँगा कि मेरा जीवन सफल हो गया।"

उस कृतनिश्चयी भिक्षुक की दृढ़ निष्ठा देखकर भगवान बुद्ध प्रसन्न हो उठे। उस पर उनकी करुणा बरस पड़ी।

ऐसे शिष्य जब बुद्ध का प्रचार करने निकल पड़े तब कुप्रचार करने वाले धीरे–धीरे शांत हो गये। मनुष्यों की उंगलियाँ काट–काटकर माला बनाकर पहनने वाला अँगुलिमाल जैसा क्रूर हत्यारा भी हृदयपरिवर्तन पाकर बुद्ध की शरण में भिक्षुक होकर रहने लगा।

आज हम बुद्ध को बहुत आदर से जानते हैं, मानते हैं। उनके जीवनकाल के दौरान उनके पीछे लगे हुए दुष्ट लोग कौन से नरक में सड़ते होंगे... रौरव नरक में या कुंभीपाक नरक में? कौन–सी योनियों में भटकते होंगे, सूअर बने होंगे कि नाली के कीड़े बने होंगे, शैतान बने होंगे कि ब्रह्मराक्षस बने होंगे मुझे पता नहीं लेकिन बुद्ध तो करोड़ों हृदयों में बस रहे हैं यह मैं मानता हूँ।

सत्य तो परमार्थ है, आत्मा है, परमात्मा है। उसमें जितना टिकोगे उतना तुम्हारा मंगल होगा, तुम्हारी निगाह जिन पर पड़ेगी उनका भी मंगल होगा।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

कुछ जानने योग्य बातें

सूर्योदय से पूर्व उठकर स्नान कर लेना चाहिए। प्रातः खाली पेट मटके का बासी पानी पीना स्वास्थ्यप्रद है।

तुलसी के पत्ते सूर्योदय के पश्चात ही तोड़ें। दूध में तुलसी के पत्ते नहीं डालने चाहिए तथा दूध के साथ खाने भी नहीं चाहिए। तुलसी के पत्ते खाकर थोड़ा पानी पीना पियें।

जलनेति से पंद्रह सौ प्रकार के लाभ होते हैं। अपने मस्तिष्क में एक प्रकार का विजातिय द्रव्य उत्पन्न होता है। यदि वह द्रव्य वहीं अटक जाता है तो बचपन में ही बाल सफेद होने लगते हैं। इससे नजले की बीमारी भी होती है। यदि वह द्रव्य नाक की तरफ आता है तो सुगन्ध–दुर्गन्ध का पता नहीं चल पाता और जल्दी–जल्दी जुकाम हो जाता है। यदि वह द्रव्य कान की तरफ आता है तो कान बहरे होने लगते हैं और छोटे–मोटे बत्तीस रोग हो सकते हैं। यदि वह द्रव्य दाँत की तरफ आये तो दाँत छोटी उम्र में ही गिरने लगते हैं। यदि आँख की तरफ वह द्रव्य उतरे तो चश्मे लगने लगते हैं। जलनेति यानि नाक से पानी खींचकर मुँह से निकाल देने से वह द्रव्य निकल जाता है। गले के ऊपर के प्रायः सभी रोगों से मुक्ति मिल जाती है।

आईसक्रीम खाने के बाद चाय पीना दाँतों के लिए अत्याधिक हानिकारक होता है।

भोजन को पीना चाहिए तथा पानी को खाना चाहिए। इसका मतलब यह है कि भोजन को इतना चबाओ कि वह पानी की तरह पतला हो जाये और पानी अथवा अन्य पेय पदार्थों को धीरे–धीरे पियो।

किसी भी प्रकार का पेय पदार्थ पीना हो तो दायां नथुना बन्द करके पियें, इससे वह अमृत जैसा हो जाता है। यदि दायाँ स्वर(नथुना) चालू हो और पानी आदि पियें तो जीवनशक्ति(ओज) पतली होने लगती है। ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए, शरीर को तन्दरुस्त रखने के लिए यह प्रयोग करना चाहिए।

तुम चाहे कितनी भी मेहनत करो किन्तु जितना तुम्हारी नसों में ओज है, ब्रह्मचर्य की शक्ति है उतने ही तुम सफल होते हो। जो चाय–कॉफी आदि पीते हैं उनका ओज पतला होकर पेशाब द्वारा नष्ट होता जाता है। अतः ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए चाय–कॉफी जैसे व्यसनों से दूर रहना चाहिए।

पढ़ने के बाद थोड़ी देर शांत हो जाना चाहिए। जो पढ़ा है उसका मनन करो। शिक्षक स्कूल में जब पढ़ाते हों तब ध्यान से सुनो। उस वक्त मस्ती–मजाक नहीं करना चाहिए। विनोद–मस्ती कम से कम करो और समझने की कोशिश अधिक करो।

जो सूर्योदय के पूर्व नहीं उठता, उसके स्वभाव में तमस छा जाता है। जो सूर्योदय के पूर्व उठता है उसकी बुद्धिशक्ति बढ़ती है।

नींद में से उठकर तुरंत भगवान का ध्यान करो, आत्मस्नान करो। ध्यान में रुचि नहीं होती तो समझना चाहिए कि मन में दोष है। उन्हें निकालने के लिए क्या करना चाहिए?

मन को निर्दोष बनाने के लिए सुबह–शाम, माता–पिता को प्रणाम करना चाहिए, गुरुजनों को प्रणाम करना चाहिए एवं भगवान के नाम का जप करना चाहिए। भगवान से प्रार्थना करनी चाहिए कि 'हे भगवान! हे

मेरे प्रभु! मेरी ध्यान में रुचि होने लगे, ऐसी कृपा कर दो।' किसी समय गंदे विचार निकल आयें तो समझना चाहिए कि अंदर छुपे हुए विचार निकल रहे हैं। अतः खुश होना चाहिए। 'विचार आया और गया। मेरे राम तो हृदय में ही हैं।' ऐसी भावना करनी चाहिए।

निंदा करना तो अच्छा नहीं है किन्तु निंदा सुनना भी उचित नहीं।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

शयन की रीत

मनुष्य को किस ढंग से सोना चाहिए? इसका भी तरीका होता है। सोते वक्त पूर्व अथवा दक्षिण दिशा की ओर सिर करके ही सोना चाहिए।

भोजन करने के बाद दिन में दस मिनट आराम करें किन्तु सोयें नहीं। भोजन के बाद दस मिनट बायीं करवट लेट सकते हैं। रात्रि को जागरण किया हो, इस कारण से कभी दिन में सोना पड़े वह अलग बात है।

सोते वक्त नीचे कोई गर्म कंबल आदि बिछाकर सोयें ताकि आपकी जीवनशक्ति अर्थिंग न हो जाये, आपके शरीर की विद्युत्शक्ति भूमि में न उतर जाये।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

स्नान का तरीका

शरीर की मजबूती एवं आरोग्यता के लिए रगड़-रगड़कर स्नान करना चाहिए। जो लोग ठंडे देशों में रहते हैं, उनका स्वास्थ्य गर्म देस के लोगों की अपेक्षा अच्छा होता है। ठंडी से अपना शरीर सुधरता है।

स्नान करते वक्त १२-१५ लिटर पानी, बाल्टी में लेकर पहले उसमें सिर डुबाना चाहिए। फिर पैर भिगोना चाहिए। पहले पैर गीले नहीं करने चाहिए। शरीर की गर्मी ऊपर की ओर चढ़ती है जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होती है।

अतः पहले ठंडे पानी की बाल्टी भर लें। फिर मुँह में पानी भरकर, सिर को बाल्टी में डालें और आँखें पटपटाएँ। इससे आँखों की शक्ति बढ़ती है। शरीर को रगड़-रगड़कर नहाएँ। बाद मे गीले वस्त्र से शरीर को रगड़-रगड़कर पोंछें जिससे रोम कूप का सारा मैल बाहर निकल जाये और रोमकूप(त्वचा के छिद्र) खुल जाएँ। त्वचा के छिद्र बंद रहने से ही त्वचा की कई बीमारियाँ होती हैं। फिर सूखे कपड़े से शरीर को पोंछ कर (अथवा थोड़ा गीला हो तब भी चलेगा) सूखे साफ वस्त्र पहन लें। वस्त्र भले सादे हों किन्तु साफ हों। बासी कपड़े नहीं पहनें। हमेशा धुले हुए कपड़े ही पहनें। इससे मन भी प्रसन्न रहता है।

पाँच प्रकार के स्नान होते हैः ब्रह्मस्नान, देवस्नान, ऋषिस्नान, मानवस्नान, दानवस्नान।

ब्रह्मस्नानः ब्रह्म-परमात्मा का चिंतन करके, 'जल ब्रह्म... थल ब्रह्म... नहाने वाला ब्रह्म...' ऐसा चिंतन करके ब्रह्ममुहूर्त में नहाना, इसे ब्रह्मस्नान कहते हैं।

देवस्नानः देवनदियों में स्नान या देवनदियों का स्मरण करके सूर्योदय से पूर्व नहाना यह देवस्नान है।

ऋषिस्नानः आकाश में तारे दिखते हों और नहा लें यह ऋषिस्नान है। ऋषिस्नान करने वाले की बुद्धि

बड़ी तेजस्वी होती है।

मानवस्नानः सूर्योदय के पूर्व का स्नान मानवस्नान है।

दानवस्नानः सूर्योदय के पश्चात चाय पीकर, नाश्ता करके, आठ नौ बजे नहाना यह दानव स्नान है।

अतः हमेशा ऋषिस्नान करने का ही प्रयास करना चाहिए।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

स्वच्छता का ध्यान

यदि शरीर की सफाई रखी जाये तो मन भी प्रसन्न रहता है। आजकल अधिकतर लोग ब्रश से ही मंजन करते हैं। ब्रश की अपेक्षा नीम और बबूल की दातून ज्यादा अच्छी होती है और यदि ब्रश भी करें तो कभी-कभार ब्रश को गर्म पानी से धोना चाहिए अन्यथा उसमें बैक्टीरिया (जीवाणु) रह जाते हैं।

कितने ही लोग उंगली से दाँत साफ करते है। तर्जनी (अंगूठे के पास वाली प्रथम उंगली) से दाँत घिसने से मसूड़े कमजोर हो जाते हैं तथा दाँत जल्दी गिर जाते हैं क्योंकि तर्जनी में विद्युत्शक्ति का प्रमाण दूसरी उंगलियों की अपेक्षा अधिक होता है। अतः उससे दाँत नहीं घिसने चाहिए एवं आँखों को भी नहीं मसलना चाहिए।

जिस दिशा से हवा आती हो उस दिशा की ओर मुँह करके कभी-भी मलमूत्र का विसर्जन नहीं करना चाहिए। सूर्य और चन्द्रमा की ओर मुख करके भी मलमूत्र का विसर्जन नहीं करना चाहिए।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

स्मरणशक्ति का विकास

यादशक्ति बढ़ाने का एक सुन्दर प्रयोग है ? भ्रामरी प्राणायाम। सुखासन, पद्मासन या सिद्धासन पर बैठें। हाथ की कोहनी की ऊँचाई कन्धे तक रहे, इस प्रकार रखकर हाथ की प्रथम उंगली(तर्जनी) से दोनों कानों को धीरे-से बंद करें। एकदम जोर से बंद न करें, किन्तु बाहर का कुछ सुनाई न दे इस प्रकार धीरे से कान बन्द करें।

अब गहरे श्वास लेकर, थोड़ी देर रोकें, ओठ बंद रखकर, जैसे भ्रमर का गुँजन होता है वैसे 'ॐ...' कहते हुए गुँजन करें। उसके बाद थोड़ी देर तक श्वास न लें। पुनः यही क्रिया दुहरायें। ऐसा सुबह एवं शाम ८ से १० बार करें। यादशक्ति बढ़ाने का यह यौगिक प्रयोग है। इससे मस्तिष्क की नाड़ियों का शोधन होकर, मस्तिष्क में रक्त संचार उचित ढंग से होता है।

प्रश्न और विचार करने से भी बुद्धिशक्ति का विकास होता है।

सुबह खाली पेट तुलसी के पत्ते, एकाध काली मिर्च चबाकर एक गिलास पानी पीने से भी स्मरणशक्ति का विकास होता है, रोग-प्रतिकारक शक्ति बढ़ती है। कैन्सर की बीमारी कभी नहीं होती, जलंदर-भगंदर की बीमारी भी कभी नहीं होती।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम

व्यक्तित्व और व्यवहार

किसी भी व्यक्तित्व का पता उसके व्यवहार से ही चलता है। कई लोग व्यर्थ चेष्टा करते हैं। एक होती है सकाम चेष्टा, दूसरी होती है निष्काम चेष्टा और तीसरी होती है व्यर्थ चेष्टा। व्यर्थ चेष्टा नहीं करनी चाहिए। किसी के शरीर में कोई कमी हो तो उसका मजाक नहीं उड़ाना चाहिए वरन् उसे मददरूप बनना चाहिए, यह निष्काम सेवा है।

किसी की भी निंदा नहीं करनी चाहिए। निंदा करने वाला व्यक्ति जिसकी निंदा करता है। उसका तो इतना अहित नहीं होता जितना वह अपना अहित करता है। जो दूसरों की सेवा करता है, दूसरों के अनुकूल होता है, वह दूसरों का जितना हित करता है उसकी अपेक्षा उसका खुद का हित ज्यादा होता है।

अपने से जो उम्र से बड़े हों, ज्ञान में बड़े हो, तप में बड़े हों, उनका आदर करना चाहिए। जिस मनुष्य के साथ बात करते हो वह मनुष्य कौन है यह जानकर बात करो तो आप व्यवहार–कुशल कहलाओगे।

किसी को पत्र लिखते हो तो यदि अपने से बड़े हों तो 'श्री' संबोधन करके लिखो। संबोधन करने से सुवाक्यों की रचना से शिष्टता बढ़ती है। किसी से बात करो तो संबोधन करके बात करो। जो तुकारे से बात करता है वह अशिष्ट कहलाता है। शिष्टतापूर्वक बात करने से अपनी इज्जत बढ़ती है।

जिसके जीवन में व्यवहार–कुशलता है, वह सभी क्षेत्रों में सफल होता है। जिसमें विनम्रता है, वही सब कुछ सीख सकता है। विनम्रता विद्या बढ़ाती है। जिसके जीवन में विनम्रता नहीं है, समझो उसके सब काम अधूरे रह गये और जो समझता है कि मैं सब कुछ जानता हूँ वह वास्तव में कुछ नहीं जानता।

एक चित्रकार अपने गुरुदेव के सम्मुख एक सुन्दर चित्र बनाकर लाया। गुरु ने चित्र देखकर कहाः

"वाह वाह! सुन्दर है! अदभुत है!"

शिष्य बोलाः "गुरुदेव! इसमें कोई त्रुटि रह गयी हो तो कृपा करके बताइए। इसीलिए मैं आपके चरणों में आया हूँ।"

गुरुः "कोई त्रुटि नहीं है। मुझसे भी ज्यादा अच्छा बनाया है।"

वह शिष्य रोने लगा। उसे रोता देखकर गुरु ने पूछाः

"तुम क्यों रो रहे हो? मैं तो तुम्हारी प्रशंसा कर रहा हूँ।"

शिष्यः "गुरुदेव! मेरी गढाई करने वाले आप भी यदि मेरी प्रशंसा ही करेंगे तो मुझे मेरी गल्तियाँ कौन बतायेगा? मेरी प्रगति कैसे होगी?"

यह सुनकर गुरु अत्यंत प्रसन्न हो गये।

हमने जितना जाना, जितना सीखा है वह तो ठीक है। उससे ज्यादा जान सकें, सीख सकें, ऐसा हमारा प्रयास होना चाहिए।

रामकृष्ण परमहंस वृद्ध हो गये थे। किसी ने उनसे पूछाः "बाबा जी! आपने सब कुछ जान लिया है?"

रामकृष्ण परमहंसः "नहीं, मैं जब तक जीऊँगा, तब तक विद्यार्थी ही रहूँगा। मुझे अभी बहुत कुछ सीखना बाकी है।"

जिनके पास सीखने को मिले, उनसे विनम्रतापूर्वक सीखना चाहिए। जो कुछ सीखो, सावधानीपूर्वक सीखो। जीवन में विनोद जरूरी है किन्तु विनोद की अति न हो। जिस समय पढ़ते हों, कुछ सीखते हों, कुछ करते हों उस समय मस्ती नहीं, विनोद नहीं। वरन् जो कुछ पढ़ो, सीखो या करो, उसे उत्साह से, ध्यान से

और सावधानी से करो।

पढ़ने से पूर्व थोड़े ध्यानस्थ हो जाओ। पढ़ने के बाद मौन हो जाओ। यह प्रगति की चाबी है।

माता–पिता से चिढ़ना नहीं चाहिये। जिस माँ–बाप ने जन्म दिया है, उनकी बातों को समझना चाहिए। अपने लिए उनके मन में विशेष दया हो, विशेष प्रेम उत्पन्न हो, ऐसा व्यवहार करना चाहिए।

भूल जाओ भले सब कुछ,
माता–पिता को भूलना नहीं।
अनगिनत उपकार हैं उनके,
यह कभी बिसरना नहीं।।

माता–पिता को संतोष हो, उनका हृदय प्रसन्न हो, ऐसा हमारा व्यवहार होना चाहिए। अपने माता–पिता एवं गुरुजनों को संतुष्ट रखकर ही हम सच्ची प्रगति कर सकते हैं।

ॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐॐ

अनुक्रम